घर की राह

१

अस्पताल के पीछे की ओर जामुन के दरख़्त के नीचे वह पड़ा रहता था। मोटा बेडौल शरीर, लंबे-लंबे गन्दे बाल, चौड़े ओंठ और बड़े कान। नाटा क़द। टूँड़ी—नाभी—पकौड़ी-सी फूली हुई। उसकी इस सूरत को देख, गाँव के लड़के उसे चिढ़ाया करते। दिन भर वह जामुन के नीचे सोता रहता, मानों साक्षात निद्रा देवी का पुत्र हो।

'टूँड़ा, ऐ टूँड़ा, उठ यहाँ से !'—गाँव के लड़के उसे चिढ़ाने लगे। दोपहर को गाँव के छोटे लड़के, जो स्कूल में पढ़ने न जाते, वे सभी इस पेड़ के नीचे इकट्ठे हो, गोलियाँ खेला करते। जब से टूँड़ा यहाँ आया, तब से उन्हें एक और भी खेलने की वस्तु मिल गई। वे गोली के साथ-साथ इस टूँड़ा से भी खेला करते।

'भंगी है !'—एक लड़का बोला—'दूर बे दूर ! देख आ रहा है यहाँ लेटने के लिए !'—एक लड़के को लक्ष्य करके दूसरा बोला।

घर की राह

कुए की जगत के पास से एक कंकड़ उठाकर पहले लड़के ने उसके सिर का निशाना साध कर मारा। 'टक' से वह कंकड़ टूँड़ा के घने बालों पर पड़ा ; पर वह हिला न डोला—वैसाही पड़ा रहा।

'यान देखों, तुम इथे मत मानों—'भग्गू तेली का लड़का गंगा बोला।

'तुम इथे त्यों मालते हो दी।'—कंपाउन्डर का लड़का कल्लू भी बोल उठा।

'हाँ यान, इसें मत माना कनों, नईं तो हम नईं खेलेंगे।'—गंगा कुछ रुष्ट-सा हो गया और अपनी गोली उठा घर की ओर चल पड़ा।

जा रहे हो, चले जाओ, बड़े अकड़ने चले हैं! यहाँ किसे पड़ी है।'—पहले लड़के ने अकड़ते हुए कहा।

'तो क्या हम उसे छू लें ? चला जा नहीं खेलता तो !'

'पल वो पला है तो पला लेने दो। तुमाला त्या बिदालता है !'—कल्लू बोला।

'वाह ! हम गोली खेलेंगे। हमारा पेड़ है। और यह हमा-हमारा खेत है। और यह हमारा कूआ है ; इसके बाप का है क्या ?'—सेठ चाँदमल का लड़का हंसराज अपने हाथों की मुट्ठियाँ बाँधता हुआ सीना तानकर बोला।

'यान आओं, हम तो तलें'—कहकर गंगा और कल्लू उछ-लते-कूदते वहाँ से चल पड़े।

घर की राह

इसी प्रकार लड़के नित्य खेला करते, टूँड़ा को खेल का साधन बनाते और आनन्द लूटते थे ।

'देखो, मैं इस जामुन पर चढ़ जाता हूँ ।'—पहला लड़का अपनी धोती घुटनों पर चढ़ाता हुआ बोला ।

'हाँ-हाँ, दो-चार कंकड़ भी रख लो ।'—हंसराज ने कंकड़ देते हुए कहा ।

'वहाँ से इस साले के सिर में मारना !'—दूसरा लड़का हाथ का इशारा करके बोला ।

इतने में दो-चार और भी लड़के आ गये ।

काजीजी का लड़का मौला इस पार्टी का सरदार था ।

'अरे यार मौला ! यह साला उठता ही नहीं ।'—पहला लड़का बोला ।

'अच्छा अभी उठाता हूँ साले को !'—अपने डण्डे को जामुन के तने से दनदनाते हुए मौला ने कहा ।

पहला लड़का धोती चढ़ाकर सर-सर-सर ऊपर चढ़ गया और बन्दर की तरह 'हू-हू' करता, एक डाली से दूसरी पर जाने लगा । काले पके जामुनों को खाता, और कुछ अपने मित्रों के लिए भी नीचे फेंकता जाता ।

मौला भी अपनी बाहें चढ़ा ऊपर चढ़ने लगा ।

'ऊपर मत आ यार' — बन्दर बना हुआ लड़का ऊपर से बोला ।

'वाह ! अच्छे-अच्छे जामुन तो आप खाता है और हमें देता है कच्चे ! अच्छे-अच्छे फेंक नहीं........'

घर की राह

'अच्छा ले !'—कहता वह ऊपर से जामुन फेंकने लगा। इस आनन्द में वृक्ष के नीचे पड़े हुए उस बालक को सब भूल गये।

'अरे मल्लू ! हमको नहीं देगा ?'—डाक्टर साहब के लड़के शैल बाबू ने आते ही कहा।

'हाँ भैया, लो, खूब लो !'—ऊपर से जामुनों की वर्षा होने लगी।

'त्यों भैया, हम तो भूल दये ?'—कल्लू शैल बाबू का मुँह ताकते हुए बोला।

'अदी नो-नो !'—उसकी नकल करता हुआ शैल कल्लू को जामुन देने लगा।

अपना पेट भर जाने के बाद मल्लू को अपनी धोती में भरे हुए कंकड़ों की याद आई। वह कूद कर टूँड़ा के ऊपर की डाली पर बैठ गया और धीरे से एक कंकड़ निकाल, उसके सिर को ताक कर मारा। 'तड़' से पड़ते ही वह जाग उठा। मुख पर बिखरे हुए घने बालों में से उसके नेत्र चारों ओर देखने लगे।

'हा हा हा !'—सब हँस रहे थे। वह समझ न सका, क्या बात है। उसकी तीक्ष्ण दृष्टि देख सब डर गये।

'कौन है रे यह ?'—शैल ने पूछा।

'खुदा जाने कौन है ?—जाने कहाँ से यहाँ आ टपका है भैया।'—मौला बोला।

'भङ्गी है, भङ्गी !'—मल्लू ने कहा।

'अछूत है ?'—शैल ने फिर से प्रश्न किया।

'हाँ भैया !'—मल्लू ऊपर से बोला। 'तड़' से फिर एक

घर की राह

कंकड़ टूँड़ा के गाल पर पड़ा। अब उसकी नींद भाग गई। वह फिर चारों ओर देखने लगा।

'मु...मुझे क्यों मारा ?'—वह चौड़े ओठों को और भी फैलाता हुआ बोला।

'चला जा यहाँ से !'—मल्लू ने कहा।

'कहाँ ?'

'जहन्नुम में !'

वह खड़ा होकर इधर-उधर देखने लगा।

'उठ, भाग यहाँ से !'—मल्लू ने आदेश दिया।

'क्यों ?'

'हम यहाँ खेलेंगे।'

'खेलते क्यों नहीं।'

'जबान दराजी करता है, ऍं ?'

वह कुछ न बोला। कुछ लड़के मौला को इशारा करने लगे। उसने अपनी बाहें चढ़ाईं और डण्डे को उठाकर उस लड़के की ओर लपका।

'उठता है कि नहीं ?'

'क्यों ?'

'क्योंकि तू भंगी है, उठ !'

वह चुपचाप पड़ा रहा।

'अरे उठता है कि नहीं, साले का सिर फोड़ दूँगा !'

'सिर फोड़ना सहज है ? जरा फोड़ो तो देखूँ !'—कहता

हुआ वह वहाँ से चला ; पर अँगड़ाई लेता फिर खड़ा हो गया ।

'भाग जा यहाँ से पाजी कहीं के !'

'ऐ ओठल्लू, भागता है कि नहीं ?'

'ले साले !'—ऊपर से जामुन की गुठली से मारता हुआ मल्लू बोला ।

'अले, फिल तुम उते तिलाने लद दये ?'—कल्लू बोल उठा ।

'क्यों चिढ़ाते हो जी उसे ?'—शैल ने मल्लू को डाटते हुए कहा ।

क्रोध में भरा टूँड़ा आँखें फाड़कर देख रहा था ; पर काज़ी का लड़का इन घुड़कियों से डरने वाला नहीं था । उसने जोर से एक छड़ी 'तड़' से उसके सिर पर मार दी और फिर दो-तीन-चार । टूँड़ा का क्रोध अश्रु के रूप में परिणत हो गया । जोर से रोता हुआ वह वहाँ से भाग चला ।

उसके चले जाने पर बड़ी देर तक लड़कों में लड़ाई होती रही । कोई कल्लू से प्रसन्न हो गया, कोई नाराज़ ; क्योंकि वह भंगी से छू गया था ।

'देख ! छूना मत !'—हंसराज बोला ।

'मौला, बाबूजी से कह दूँगा कि तूने मारा है ।'—शैल बोला ।

'हाँ, याद नखना, मैं भी बाबू दी थे तहूँदा !'

पर काज़ी का लड़का किसी से नहीं डर सकता । वह सब को फटकारता दौड़ता वहाँ से चला गया । सब देखते ही रह गये ।

गाँव के बूढ़े कहते कि टूँड़ा भंगी का लड़का है और उसके माँ-बाप इस गाँव से ५ मील दूर ढोलमगाँव में उसे बच्चा छोड़कर मर गये थे। ढोलमगाँव में वह बीमार पड़ा था—सिर फोड़ों से सड़ गया था। उस समय गनीउमर के एक नौकर ने उसे अपने घर रख लिया था। जो मुंशीजी इस बालक को ले आये थे, दस दिन के बाद ही परलोक सिधार गये थे। तब से यह बच्चा इस गाँव में न जाने कैसे पला, और इतना मोटा-ताज़ा हो गया।

पर, गाँव के युवकों की एक ऐसी मंडली भी थी, जो कहती थी कि टूँड़ा में भंगी के कोई लक्षण नहीं पाये जाते। वह तो कंजर का लड़का है, जिसे पुलिस के धावे के डर से वे लोग जंगल में छोड़कर भाग गये थे, और एक भेड़िया उसे उठा ले गया था। तभी तो वह भेड़िये-जैसा भयानक दिखाई देता है! जंगल में भेड़ियों

के साथ वह घूमा करता था। जब एक दिन राजा साहब जंगल में शिकार खेलने गये, तो इस भेड़िये को उठा लाये थे।

फिर भी यह एक जटिल समस्या थी, जिसे अभी तक कोई न सुलझा सका था। दोपहर को नीम के नीचे चरखा कातती गाँव की स्त्रियाँ, जो इस बच्चे को रोटी के दो सूखे टूक डाल दिया करती थीं, वे बड़े प्रेम से कहतीं—आसमान से टपका है!

कुछ भी हो, यह बात तो स्पष्ट थी कि उसका इस गाँव में कोई न था। न माँ, न बाप; बहन-भाई कोई भी नहीं। अकेला इधर-उधर भटकता फिरता। जब बहुत भूख लगती, इधर-उधर से भीख माँग लाता और अस्पताल के पीछे के जामुन के नीचे बैठ कर खाता, कुए के पास के हौज से पानी पी दिन-भर पड़ा सोता रहता। जब मन में आता, गनीउमर की दूकान के सामने खड़ा हो, टकटकी लगाये न-जाने क्या देखा करता। कभी वहां से—मन में आते ही—अपने घने बालों को राक्षस की भाँति इधर-उधर घुमाकर मुट्ठी बाँध दौड़ने लगता, मानों चोरी करके भाग रहा हो, किसी के डर से चौकड़ी भर रहा हो।

पर, गाँव के अधिकांश लोग उसे अछूत ही मानते, और 'दूर रह!' के प्रेम-भरे शब्दों ही से उसे सम्बोधन करते। सेठ चाँदमलजी की दूकान पर जब नित्य वह 'एक पैसा दो सेठजी!' की पुकार लगाता, तब सेठजी अपना जूता निकाल कर उस पर फेंकते। पर, रोज़ मार खाने पर भी वह इस दूकान का मोह न तोड़ता। रोज़ आता, मांगता, मार खाता, फिर रोता हुआ चला जाता।

घर की राह

'माँ, माँ, देखो तो !'—शैल घर में घुसता, माँ से लिपटता, कौतूहल के साथ बोला।

'क्या है ?'—माँ ने गुस्से से कहा।

'देखो तो, देखो तो, बाहर !'—शैल हाथ से संकेत करता हुआ बोला।

'पर है क्या ?'

'वह...टुंड़ा है न ?'

'हाँ, है तो ?'

'वह...वह रोता है—उसे रोटी दे दो !'

'अच्छा, यह बात है !'—माताजी ने हँसते-हँसते शैल को गले लगाते हुए कहा।

'माँ, वह रोता है, वह भूखा है, उसे भूख लगी है। कल... कल लड़कों ने उसे मारा ! देख मारा था न कल्लू ?'

'हाँ मातादी ! तल बोत माला ता उते। थून भी तो नितला था !'—कल्लू गुल्ली को धीरे से नीचे रखता हुआ बोला।

'माँजी, बाहर चाय माँग रहे है।'—नौकर ने भीतर आते हुए कहा।

'कौन आया है ? दिन-भर बस यही चाय और दूध !'—माँजी ने क्रोध से कहा।

'गनीउमर आये हैं।'

'अच्छा। ले कल्लू, ये रोटी देदे उसे। अब कभी मत माँगना।' —माँजी ने रोटी देते हुए कहा।

घर की राह

'ठाकुर ! यह लो, दे आओ, बाहर ।'—डाक्टर साहब की लड़की रानी ने नौकर को चाय का प्याला देते हुए कहा ।

ठाकुर चाय ले गया, और दोनों बच्चे रोटी लेकर बाहर चले गये ।

'लीजिए भाई साहब !'—अस्पताल से सटी हुई अपनी वाटिका में आरामकुर्सी पर बैठे डॉक्टर साहब ने चाय देते हुए कहा ।

'ओहो, बड़ी तकलीफ़ की आपने डाक्टर साहब !'—गनी-उमर ने कहा ।

'अजी, इसमें तकलीफ की कौन बात है ?—ठाकुर, जाओ पान लाओ । देखो, तश्तरी में लाना ।'

'अभी लाया हुजूर'—कहकर ठाकुर पान लेने चल दिया ।

'बड़ी अच्छी बगिया बनाई है आपने डॉक्टर साहब ! यह फूल के पौधे कितने अच्छे हैं ! वाह !'

'जी हाँ । यह मैंने बड़ी दूर से मँगाये हैं, मुझे बड़ा शौक है । शाम को जब तक मैं बगीची में न बैठूं, तब तक मुझे चैन नहीं पड़ता ।'

'जी आपके कदमों का तुफैल है, ऐसी खूबसूरत बगिया और कौन बना सकता है !'—गनीउमर ने हाथों से अभिनय करते, पान चबाते हुए कहा ।

'तो आप अपने गाँव कब जाने वाले हैं ?'—डॉक्टर साहब ने, मूछों पर हाथ फेरते हुए प्रश्न किया ।

'जी, बस कुछ ही दिनों में जाऊँगा ।

'अच्छा, बरसात की वजह से जा रहे हैं ?'

'जी, बरसात में दूकान बन्द रहती है ।'

'अच्छा तो आप वहाँ से हमारे लिए एक दर्जन सरोता जरूर भेज दीजिएगा ।'

'हाँ साहब, जरूर—जरूर, पारसल करके भेज दूँगा ।'

'नहीं नहीं, जब आइए, तब लेते आइएगा । जल्दी नहीं है ।'

'नहीं-नहीं साहब, जल्दी हो, तो जल्दी भेज दूँगा ।'

'जैसी आपकी इच्छा ।'

'नहीं, जैसी आपकी इच्छा ।'

बगीची के बाहर के विशाल मैदान में, शाम को गाँव के लड़के शैल बाबू के संग गुल्ली-डंडा खेलने आते । आज सब गेंद मार धौंसा खेल रहे थे । कुछ कोलाहल-सा सुनाई दिया ।

'ठाकुर !'—डॉक्टर साहब ने आवाज़ दी ।

जवाब न मिला ।

'ठाकुर !'

'आया हुजूर !'

'जाओ देखो, यह क्या शोर है ।'

ठाकुर दौड़ता हुआ बाहर गया । टूँडा रोता हुआ अस्पताल के फाटक के पास आ गिरा ।

'अबे दूर रह दूर, यहाँ आया है !'—ठाकुर ने क्रोध-पूर्वक कहा ।

'कौन है भई ?'—डाक्टर साहब ने पूछा ।

'साहब यह टूँड़ा है ।'

'आने दो उसे ।'

बाल बिखरे हुए, फटा जर्जर मैला कुरता पहने, लँगोटी लगाये, पकौड़ी-सी टूँड़ी पर एक हाथ रक्खे, दूसरे हाथ से आँसू पोंछता हुआ, वह भीतर दाखिल हुआ ।

'क्यों क्या हुआ, क्यों रोता है ?'

वह अपने शोक के आवेग को न रोक सका । बगीची के फाटक के पास आ जमीन पर गिर पड़ा और रोते-रोते बोला—बा...बाबू सा...ब !...मु...झे...लड़के...मा...रते...हैं । आ...आप मुझे...यहीं मा...र डा...'—उसका हृदय फटा जा रहा था । जिस बालक के हृदय के अन्दर मूढ़ता भरी हुई थी, जो एक पाषाण की तरह मूक और चुप दिखाई देता था, उसी का हृदय, आज पसीज-पसीज कर इस प्रकार बहने लगा ।

'किसने मारा तुझे ?'—डॉक्टर साहब के इन प्रेमयुक्त शब्दों ने उसके बाल-हृदय को पिघला दिया, वह और जोर से रोने लगा ।

'सा...सा...ब, मु...झे...स...सब रोज मारते हैं । वो...वो...काला लड़का...उसने...मुझे...कल भी...मारा था !'

'ठाकुर, जाओ बुलाओ उन लड़कों को ।'—डॉक्टर साहब सिर के घाव को देखकर बोले । ठाकुर दो-तीन लड़कों को पकड़े हुए दाखिल हुआ ।

'बन्द करो फाटक को'—डाक्टर साहब ने हुक्म दिया ।

'क्यों मल्लू, तूने इसे मारा ?'

घर की राह

'सा...सा...साब...मैं...मैंने तो नहीं मारा'—दोनों हाथों को मलता सिटपिटाता हुआ मल्लू बोला।

'क्यों सत्तार ? सच-सच बोलना, इसे किसने मारा। सच कहना, नहीं तो !...'

सा...सा...ब सच-सच कहूँगा। हम—हम सब—भैया और हम, सब गेंद खेल रहे थे, गेंद इसके लग गई। इसने...इसने गेंद उठा ली। और बढ़ई के बाड़े में फेंक दी। फिर...फिर साहब इस मल्लू ने इसे एक ढेला मार दिया। काना सत्तार हाथ जोड़ते, डरते-डरते बोला।

'बदमाश, मारते हो एक गरीब को !'—कहकर डॉक्टर साहब ने मल्लू के एक चपत जमाई और सबके कान खींच दिये। सब लड़के भाग गये। फिर शान्ति फैल गई, टुड़ा वहीं पर बैठा रहा।

'ठाकुर, जाओ बुलाओ कंपाउन्डर साहब को।'

'अच्छा हुजूर।'

'ज्यादा चोट लग गई साहब बेचारे के !'—गनीउमर ने घाव देखते हुए कहा।

'जी हां। अभी दवा लगा दी जाती है।'

'अबे तू कहाँ रहता है ? मैं तो समझा, तू मर गया। आज एक महीने से कहाँ रहता है ?'—गनीउमर ने पूछा।

वह कुछ न बोला।

'किसका लड़का है ?'—डॉक्टर साहब ने प्रश्न किया।

'साहब, मुंशीजी ने इसे पाल लिया था। भंगी का लड़का है।'

'ऐं ! भंगी का ?'

'जी ।'

'आदाबअर्ज !'—कम्पाउन्डर ने सलाम करते प्रवेश किया ।

'जरा इस बच्चे का ड्रेसिंग कर दो । देखो, एच. पी. लोशन से धोना ।'

'जी ।'—कह कम्पाउन्डर उसे डिस्पेन्सिग टेबल पर ले गये ।

'अच्छा, तो आपने रख लिया है ?'

'जी नहीं, पड़ा रहता था । एक महीने से न जाने कहां रहता है ।'

'तो अब आप के पास नहीं रहता ?'

'जी नहीं । कुछ काम भी तो नहीं करता पाजी ! दिन-भर सोता रहता है ।'

'तो कोई बीमारी है ?'

'यह तो नहीं मालूम ।'

'इसे देश ले जाइएगा ?'

'विचार तो है ; पर जब चले तब तो ।'

'ऐ लड़के ! यहाँ आओ ।'

टूँड़ा सिर पर पट्टी बाँधे घूरता हुआ आया ।

'चलेगा मेरे साथ देश ?'—गनीउमर ने अपनी छड़ी को जमीन पर ठोकते हुए पूछा ।

'उँहुँक ।'

'क्यों ?'

'उँहुँक ।'

'अबे मुँह से तो बोल ।'

'उँहुँक, मैं नहीं जाऊँगा ।'

'खैर, आजकल कहाँ रहता है ? कहाँ खाता-पीता है ?'—डॉक्टर साहब ने आर्द्र हृदय से पूछा ।

'भीख माँग लाता हूँ साब ।'—दोनों हाथों को मुँह के पास ले जाता हुआ वह बोला ।

'कंपाउन्डर साहब ! इसे इन्डोर पेशेन्ट के वार्ड में दाखिल करलो । मोदी का आध सेर आटा और दाल की चिट्ठी लिख दो ।'

'वाह साहब ! खुदा आपको खुश रक्खे । दिल हो, तो ऐसा हो !'—गनीउमर ने कंपाउन्डर की ओर सिर हिलाते हुए कहा ।

'जी बहुत कम ऐसे दिल वाले होते हैं ।'—कंपाउंडर ने चिट्ठी लिखते हुए कहा ।

'अच्छा डॉक्टर साहब, सलाम !'

'अच्छा, जायँगे ?'

'जी ।'—कहकर गनीउमर उठे, झुक कर सलाम किया और बाहर निकले । अस्पताल के बाहर के विशाल मैदान में लड़कों के खेल को देखते, स्टेशन वाली धूल से ढकी हुई सड़क से अपने घर की ओर चल दिये ।

३

डॉक्टर बिसुनसहायजी जाति के कायस्थ थे। दिल के बड़े उदार। जब कभी आपके हृदय में दया का स्रोत बह निकलता, तब आपकी धर्मपत्नीजी को बहुत भय रहता कि कहीं ये उसमें बह न जायँ। इस कारण आप हमेशा यह ध्यान रखतीं कि ऐसा न हो कि आपके हृदय में छिपा हुआ यह दया का झरना कहीं बहने लग जाय।

'देखोजी, यह लड़का आज से भीतर ही रोटी खायगा।'—डॉक्टर साहब ने बेंत ढूँढते हुए कहा।

'क्यों ? अस्पताल से तो वह आजकल खा ही रहा है।'—श्रीमतीजी ने प्रश्न किया।

'तो अस्पताल कहाँ तक खिलाती रहेगी ! इसे अब अपने यहाँ खिलाना होगा।'

'लेकिन आप जानते हैं, इससे गाँव में आपकी कितनी निन्दा होगी। एक भंगी के......'

'बस, मुझे गाँव की कुछ परवा नहीं! कौन कहता है वह भंगी है? बिल्कुल झूठी बात है।'

' सभी ता इसे भंगी बताते हैं। धर्म भिरष्ट नहीं...'

'ठाकुर!'

'आया हुजूर!'—कन्धे पर पानी की गगरी रक्खे ठाकुर दौड़ता हुआ आया।

'क्यों, उस बदरीनाथ ने नहीं कहा था कि वह माली का लड़का है, भंगी का नहीं?'

'न होगा साहब!'

'अरे, न होगा से क्या मतलब! तुम्हारे सामने नहीं कहा?'

'कहा क्यों नहीं साहब!'

'टूँड़ा, इधर आओ।'

वह धीरे-धीरे आया।

'चलो इनके पैर छुओ।'

टूँड़ा ने घुटनों के बल बैठ, सिर जमीन पर टेक दिया।

'अच्छा खड़ा हो।'

वह खड़ा हो गया।

'चलो सलाम करो।'

अपने दाहिने हाथ को जोर से सिर पर लगा उसने सलाम का

'बोलो—राम-राम।'

'राम-राम!'—भर्राई हुई आवाज़ में वह बोला और रोने लगा।

'अरे भई, उसे तंग मत करो'—डॉक्टरनी जी दया दिखाते हुए बोलीं। उनके स्वभाव में रजस और तमस की अधिकता थी; इसी से वह बार-बार क्रोधित हो जातीं; पर किसी के आँसू टपकते देख, उनका हृदय भी भर आता था।

'तो समझीं, इसे यहीं पर रोटी खिलाना। अब यह यहीं पर रहेगा।'

'पर इसे घर के बाहर रखना पड़ेगा। घर में मैं रोटी न दूँगी। भंगी को मैं अपने घर में न रक्खूगी!'—डाक्टरनी फिर क्रोधावेश में बोलीं।

'मैं कहता हूँ, तुम्हें रखना होगा! भंगी हो चाहे चमार, इससे तुम्हें कोई मतलब नहीं!'—डॉक्टर साहब गरज उठे। साफा सिर पर रख आप अस्पताल चल दिये।

डाक्टरनी इस अपमान को न सह सकीं। यह अपमान एक नौकर और अछूत—भंगी—लड़के के सामने हुआ था! पर वे विवश थीं। क्रोध होते हुए भी डॉक्टर साहब के आदेश को टालना असंभव था।

'बाहर बैठ!'—डॉक्टरनीजी ने कहा। वह बाहर चला गया और एक जगह पड़कर लेटे-लेटे सामने के कुएँ से पानी भर रही पनिहारियों को देखता रहा।

'कैसे गगरी फोड़ डाली री, क्या आँखें फूट गई हैं!'—ठाकुर की लड़की ने अभी गगरी फोड़ डाली थी, उस पर डॉक्टरनी क्रोधित होती हुई बोलीं।

घर की राह

'माँजी, छूट गई।'

'खाती नहीं क्या? सब-के-सब घर में ऐसे ही भरे पड़े हैं! खाने को तो सब आ जाते हैं, देने को कोई नहीं। अरी रानी, देखती नहीं, वह तरकारी जो जल रही है!'—डॉक्टरनी रसोई घर में प्रवेश करती हुई बोलीं।

'यों ही बड़बड़ाया करती हैं!'—पारबती गगरी सिर पर रख कर गुनगुनाती हुई चली गई।

गाँव की जनता धार्मिक अधिक होती है। ब्राह्मण ब्राह्मण में भेद होता है। ब्राह्मण ब्राह्मण के हाथ का, महाजन महाजन के हाथ का नहीं खाता। कोई-कोई तो अपनी जाति के हाथ के अलावा किसी का छुआ पानी भी नहीं पीते, फिर और क्या कहा जाय। ऐसे धार्मिक गाँव में ऐसा अधर्म हो जाय, कि एक 'अछूत' एक कायस्थ के घर में रहे, छूए और खाये-पोये और वही काय-स्थ डॉक्टर जनता को, उच्च गुर्जर गौड़ ब्राह्मणों को दवाई दे और छूए! इस बात को गाँव की धार्मिक जनता कैसे सह सकती है? क्यों वह चुप्पी साधे? क्यों वह आन्दोलन न करे? 'धर्म के पतन' के डर से पृथ्वी के रसातल में डूब जाने के भय से, दो-चार देवता नाज़िम साहब के पास पहुँचकर अपना दुखड़ा रोने लगे।

'अन्नदाता! ऐसा तो न होना चाहिए।'—एक देवता बोले।

'मालिक, हमार धरम भिरस्ट भवा जात है!'—मोटे तुलसी महाराज अपनी चोटी पर हाथ फेरते हुए बोले।

घर की राह

'सब के सब दीवानजी के पास अरजी काहे न करत हो ?'—एक तीसरे देवता बोल उठे ।

नाज़िम साहब सब समझ गये । उन्हें सांत्वना दे, आप अस्पताल की ओर रवाना हुए ।

जब नाज़िम साहब अस्पताल पहुँचे, तब डॉक्टर साहब भोजन करने की तैयारी में थे ।

'डॉक्टर साहब हैं ?'—बाहर से ही नाज़िम साहब ने आवाज़ दी ।

'आइए-आइए, तशरीफ लाइए भाई साहब !—ऐ ठाकुर जरा बाहर से कुरसी तो उठा ला ।'—डॉक्टर साहब ने कहा ।

नाज़िम साहब कुरसी पर बैठ गये ।

'ठाकुर, वह टूँड़ा कहाँ है ?'

'बाहर होगा साहब !'

'बाहर क्यों, उसे यहीं रखने को न कहा था ? जाओ, उसे बुला लाओ !'

उसके भीतर आते ही डॉक्टर साहब ने प्रश्न किया—क्यों, रोटी खाली तूने ?

उसने सिर हिलाया ।

'मुँह से बोलो ।'

'ऊँहुँक ।'

'जी, कहा करो ।'

'जी, नहीं ।'—रोते-रोते वह बोला ।

'अरे रोता क्यों है ?'

उसने जवाब न दिया।

'कहिए भाई साहब, आज कैसे निकल पड़े? (टूँड़ा से) बैठ जा उधर! (रानी से) देखो बेटी, इस लड़के को परोसो'—एक साथ तीनों से बातें करते डॉक्टर साहब चौकी पर बैठते हुए बोले।

'आज भोजन इतनी देर से?'—नाज़िम साहब एक हाथ से अपनी टोपी उतारते और दूसरे से सिर के पसीने को पोंछते हुए बोले।

'जी, आज एक केस आगया था, ऑपरेशन का।'

'अच्छा, यह लड़का कौन है?'

'कोई अनाथ है बेचारा, मैंने रख लिया है। पड़ा रहेगा।'

'पड़ा तो रहेगा; पर जानते हैं यह कौन जात है?'—नाज़िम साहब अपनी आखों को नचाते हुए बोले।

'कोई जात हो, हमें इससे क्या?'—डॉक्टर ने रोटी का ग्रास मुँह में रखते हुए कहा।

'इसके क्या मानी साहब! आपको गाँव में रहना है कि नहीं?'

'क्यों, गाँव में क्यों नहीं रहना है!'

'तब फिर ऐसी बातें क्यों करते हैं! आप जानते हैं, यह भंगी है—क्या आप भंगी को घर में रख सकते हैं?'

'पर कौन कहता है, यह भंगी है?'

'सारा गाँव कहता है!'

'कहा करे, इससे हमें क्या?'—दाल में नोन डालते हुए डॉक्टर बोले।

'पर यह भी ख़याल है कि आपको गाँव में रहना है, गाँव में रहकर आप औरों के धर्म को भ्रष्ट नहीं कर सकते।'

'हाँ, यह ठीक है ; लेकिन गाँव वाले झूठ बोलते हैं, मूर्ख हैं। यह भंगी का लड़का नहीं है।'

'आपने कैसे जाना कि यह भंगी नहीं है।'

'ऐसा मूर्ख थोड़े ही हूँ, कि इस बात को जाने बिना ही उसे रख लेता।'

'अच्छा, तो आपने कैसे जाना ?'

'ऐ ठाकुर, जाओ ज़रा बदरीनाथ को तो बुला लाओ। अभी मालूम हो जाता है।'

'कुछ बताइए तो ?'—नाज़िम साहब ने फिर से प्रश्न किया।

'भाई साहब !'—हाथ धोते हुए डॉक्टर बोले—'गाँव के लोग तो मूर्ख हैं। अभी इसी बदरीनाथ ने मुझसे कहा था, कि यह लड़का भंगी नहीं, माली है।'

'डॉक्टर साहब, आप सीधे आदमी हैं। आप नहीं जानते, बदरीनाथ बड़ा चलतापुर्जा है। वह इधर की उधर लगाया करता है।'

'पर जनाब, उसके अनेक साथी भी तो यही कहते हैं।'

'कहते होंगे ; पर वे सब समय पर इंकार कर जाने वाले हैं।'

सामने के दरवाजे से एक युवक दाखिल हुआ। सुन्दर शरीर, विशाल वक्षस्थल, लम्बी मूँछें, भरा हुआ चेहरा। गले में बेले की माला डाले हुए, पान के बीड़े से बाँया गाल फुलाये हुए। यही बदरीनाथ था। इसे गाँव का बच्चा-बच्चा जानता था।

घर की राह

युवक पार्टी का सरदार और गाँव के समीप बहती नदी के किनारे अपना आश्रम जमाये बूढ़े महन्तजी का वह अनोखा शिष्य था। महन्तजी की कुटिया के आस-पास लगाई वाटिका में, शाम के समय गाँजा फूँकते हुए बदरीनाथ की एक-एक बात पर गाँव के अनेक युवक लट्टू हो जाते।

'क्यों भई बदरीनाथ, यह लड़का भंगी तो नहीं है?'—अन्दर आते ही, डाक्टर ने प्रश्न किया।

उसने एक पान नाज़िम साहब को दे, दूसरा अपने मुँह में रखा।

'न होगा साहब!'

'यह माली न है?'

'होगा साहब!'

'अरे! होगा साहब के क्या मानीं? आज सुबह हो तुमने न कहा था, कि यह माली है?'

'हाँ कहा तो था साहब!'

'तो यह बात सच है?'

'जी, सच तो हई।

'तो बस, लीजिए जनाब!'

'तुम्हारे पास क्या सबूत है, कि यह माली है?'

'सबूत कैसा? सबूत की क्या जरूरत है साहब?'—पान को चबाते, हास्य को रोकने का प्रयत्न करते हुए बदरीनाथ बोला।

'तो फिर तुमने कैसे जाना कि यह भंगी नहीं है?'—नाज़िम साहब जरा तेजी से बोले।

'हुजूर, मैं अच्छी तरह जानता हूँ और इसीलिए कहता हूँ कि यह भंगी नहीं है।'

'अच्छा, जरा भीतर आओ'—कहकर तीनों जने भीतर कमरे में चले गये, और धीरे-धीरे बातें करने लगे।

टूँड़ा को आज मनमाना भोजन मिला था। सामने पत्तल रक्खी हुई थी। पत्तल पर घी से चुपड़ी तीन मोटी रोटियाँ, दो-तीन तरह के शाक और अचार थे। एक दोने में दाल और दूसरे में रायता रक्खा था। इतने दिनों की उसकी अशान्त भूख, इन खाद्य पदार्थों को देख सतेज हो उठी। मुँह में पानी आ गया। भली भाँति परसा भी न गया था, कि उसने अपने मोटे-मोटे हाथों द्वारा, मोटे-मोटे ओठों को ऊँचा नीचा करते हुए, खाना शुरू कर दिया। देखते-देखते वह दस-बारह रोटियाँ उड़ा गया।

'राक्षस है राक्षस!'—रसोई घर में से आवाज़ आई।

'कितना खाये जाता है?'—डॉक्टर साहब की लड़की रानी ने साड़ी के आँचल से मुँह पोंछते हुए धीरे से कहा।

'यह भूखा है सरकार!'—ठाकुर ने चौकियाँ धोते हुए कहा।

'ओल लोगे?'—कल्लू बोल उठा।

'और लाऊँ?'—शैल उसकी पत्तल पर झुकते हुए पूछने लगा।

'उसका पेट फोड़ डालोगे क्या?'—डॉक्टरनी कड़क पड़ीं।

दोनों बालक सिटपिटा गये। चुपके से गुल्ली-डंडा उठा, बड़ के नीचे खेलने भाग गये।

४

गाँव के बाजार के एक सिरे पर स्थिति जगन्नाथजी के मंदिर के सामने की गली में से निकलते ही एक ढलाव दिखाई देता है, जो उजाड़ नदी से मिल जाता है। इतने नीचे ढलाव को देख यह अनुमान किया जा सकता है कि किसी जमाने में यह गाँव पहाड़ी पर बसा होगा। बरसात में नदी यहाँ तक आ जाती है। सामने ही नदी को पार करने के लिए एक पुल बना हुआ है, जो एक विशाल मैदान से जा मिला है, इसे सोरती का मैदान कहते हैं।

आज यहाँ गाँव के मनुष्यों का ठट्ठ लग रहा है। सारे गाँव में नाज़िम साहब नेढिंढोरा पिटवा दिया है कि गाँव के सब लोग यहाँ इकट्ठे हों। इसी से गाँव के सब लोग यहाँ इकट्ठे हुए हैं। एक फर्श पर आठ-दस कुर्सियाँ रखी हैं, एक कुर्सी के सामने टेबुल रखा हुआ है।

घर की राह

जब बदरीनाथ डॉक्टर साहब के घर में से निकला, तब उसका चेहरा प्रफुल्लित दिखाई देता था। फाटक के बाहर निकल, मैदान में आते ही उसने जरा जोर से खाँसा और मूँछों पर ताव देता एक गाना गुनगुनाता सड़क पर हो अपने महंतजी की कुटिया की ओर चल दिया। बदरी के चले जाने के एक घंटे बाद तक, नाज़िम और डॉक्टर साहब आपस में काना-फूसी करते रहे।

जब उजाड़ नदी के पक्के पुल के ऊपर नाज़िम साहब, डॉक्टर साहब और थानेदार साहब बातें करते जा रहे थे, तब सूर्य नदी की तरंगों के ऊपर पश्चिम में आंखें मीच रहा था। प्राची दिशा ने केसरिया साड़ी पहन रक्खी थी। सारती के मैदान में, महंतजी की कुटिया की ओर से हारमोनियम के स्वर सुनाई दे रहे थे।

अनेक अफसरों को देख, सब लोग खड़े हो गये। सभापति का पद नाज़िम साहब ने ग्रहण किया। बगल की कुर्सियों पर थानेदार और डॉक्टर भी बैठ गये। थोड़ी देर में शान्ति फैल गई।

'बदरीनाथ आ गये ?'—नाज़िम साहब ने प्रश्न किया।

'अभी लाया हुजूर !'—शहनाजी बोले।

बदरीनाथ महन्तजी की बगीची में, एक चमेली के लता-मंडप के नीचे चट्टान पर बैठकर हारमोनियम बजा रहा था। शहनाजी उसे बुला लाये। आकर वह नीचे फ़र्श पर बैठ गया।

नाज़िम साहब ने खड़े होकर कहा—उपस्थित सज्जनो, आज आप लोगों को खास तौर पर निमंत्रित किया गया है। आज बड़ी खुशी

का दिन है। हमारे महाराव के यहाँ आज युवराज ने जन्म लिया है; इसलिए दीवान साहब का हुक्म है कि आज राज्य-भर में आनन्दोत्सव मनाया जाय। इसीलिए आज आप लोगों को यहाँ बुलाया गया है। अच्छा, आप सब मिल कर कहिए—श्रीमान् महाराव साहब की जय!—जयजयकार की ध्वनि से वातावरण गूँज उठा। केवल बदरीनाथ न बोला।

'एक बात और है'—नाज़िम साहब ने फिर से बोलना शुरू किया—'इस खुशी में बदरीनाथजी आप लोगों को एक मंगल-गान सुनायेंगे। आप लोग जानते होंगे कि बदरीनाथजी कवि हैं; और इस खुशी में उन्होंने एक गायन बनाया है। आशा है वह गायन आप को बहुत पसन्द आयेगा।'—नाजिम साहब मुँह का पसीना पोंछते हुए बैठ गये। थानेदार साहब ने कुछ संकेत किया। फिर आप उठ खड़े हुए और बोलने लगे—प्यारे भाइयो, एक बात और रह गई। बड़े अफसोस की बात है कि आप लोग सच्ची बात जाने बिना ही किसी की निंदा करने लग जाते हैं। यह अच्छी बात नहीं। देखिए डॉक्टर साहब कितने दयालु हैं, कितने दया के सागर हैं! वह टूँड़ा, जो गाँव में भीख माँगता फिरता था, जिसे गनीउमर अपने देश ले जाना चाहते थे, उसे आपने आश्रय दिया है। एक बूढ़ा बीच ही में बोल उठा—परन्तु अन्नदाता वह भंगी है!

'जरा सुनो भी, बिना सुने ही बीच में क्यों बोलते हो!'—नाज़िम साहब अपना हाथ जोर से टेबल पर ठोंकते हुए बोले—'वह भंगी नहीं है। किसी के पास इसका सबूत नहीं है। अभी

बदरीनाथ तुम्हें सब बातें बतायेंगे।'—यह कहकर नाज़िम साहब बैठ गये। स्कूल के लड़के बताशों और मिठाइयों की ओर देखने लगे।

'अच्छा, बदरीनाथजी, सुनाओ अपना भजन'—थानेदार बोले।

'बहुत अच्छा जनाब।'

बदरीनाथ के सिर से चमेली के तेल की खुशबू उड़ रही थी। वह लंबी काली किनार की बंगाली ढंग की धोती पहने था। उसके शरबती मलमल के कुरते के ऊपर गले में बेले का हार पड़ा था। वह टेबल पर हारमोनियम रखकर गाने लगा।

चारों ओर से वाह! वाह! की आवाज़ें आने लगीं। थानेदार साहब की आँख के इशारे के साथही बदरीनाथ ने कहना शुरू किया—उपस्थित सज्जनो! मैं एक बात कहना चाहता हूँ। मेरे पिताजी ने, मरने से पहले मुझे बतलाया था कि टूँड़ा माली का लड़का है। उसके बाप और मेरे पिताजी में अच्छी मित्रता थी। इसी से मुझे मालूम है कि यह माली का लड़का है। आशा है, आप लोग अपना भ्रम दूर कर लीजिएगा। व्यर्थ किसी के जीवन को बर्बाद करना अच्छा नहीं।

युवराज-जन्मोत्सव की खुशी में मिठाई बँटने के बाद सभा विसर्जित हुई। गाँव के तीनों बड़े अफ़सर भी एक ओर चल दिये।

'इसमें अवश्य कोई रहस्य है भाई, देखो न तीनों कैसे मिल गये हैं!'—चाँदमल तीनों की ओर अँगुली प्रदर्शित करते हुए बोले।

'जरूर कोई बात है, तभी तो!...और यह बदरीनाथ भी कैसा उन्हीं से मिल गया है?'—दूसरे सेठजी बोले।

घर की राह

'सब मिलकर महारावजी की सेवा में अर्जी पेश करो'—एक ब्राह्मण देवता ने तम्बाखू फांकते हुए कहा।

'बिखेर दो पलस्तर सबन का! काहे डरत हौ!—तुलसी महाराज अपनी चोटी फटकारता हुआ बोला।

महन्तजी की बाटिका में भी खूब हा-हा ही-ही हो रही थी।

'क्या खूब गोली मारी है तूने भी!'—बदरीनाथ के एक मित्र ने उसकी पीठ ठोकते हुए कहा।

'अब रहने भी दो अपनी उस्तादी!'—हारमोनियम उठाते हुए, बदरीनाथ बोला।

'अरे यह क्या शोर-गुल मचा रक्खा है?'—धूनी के पास के पत्थर पर चिमटा खनखनाते हुए महन्तजी बोल उठे। सब चुप हो गये। नदी के जल के शीतल कणों को आलिंगन करता हुआ वायु का झोंका, बाटिका के पौधों को, चमेली के लता-मण्डप और कुटिया के पास खड़े अंजीर के वृक्ष को हिलाता, मानों सबके वार्त्तालाप को हर ले गया।

डाक्टर साहब के हृदय से दया, प्रेम और ममता का जो झरना फूट निकला था, उसे गाँव की उच्च जातियों के विरोधरूपी पहाड़ की आड़ से रुक जाने का डर था; पर सोरती के मैदान की मीटिंग और नाज़िम साहब की भर्त्सना ने उस विरोधरूपी पहाड़ को हटा दिया था। यही कारण था, कि जब डॉक्टर साहब हवा-खोरी से घर लौटे, तब वे बड़े प्रसन्न थे।

'टूँड़ा, इधर आओ।'

'आया।'—कहता हुआ टूँड़ा धीरे से किवाड़ खोल कर भीतर आया।

'जी आया—कहा करो।'—डॉक्टर साहब ने आँगन की खाट पर लेटते हुए कहा।

'जी, अच्छा।'

'बेटी रानी !'

रानी 'जी' कहती, दौड़ती हुई आई ।

'देखो बेटा ! कल इसे नहलाने का प्रबन्ध करना ।'

'ठाकुर !'

'आया सरकार !'

'कल नाई को बुलाकर इसके बाल कटवाना और दरजी को बुलाकर कपड़े सिलवाना । इसे स्कूल भी भेजना है ।'

टूँड़ा नाम से वह चिढ़ता था ; इसलिए उसका नाम मुन्नू रक्खा गया । दूसरे दिन प्रातःकाल नाई को बुला, उसके रींछ-से घने बालों को कटवाया गया । साबुन से नहलवाया गया । रेज़े का कुर्ता और धोती पहनाई गई और कुछ दिनों में वह पाठशाला भी जाने लगा ।

उसके मोटे बेडौल शरीर को देखकर स्कूल के छोटे बच्चे उससे डरते थे ; पर क्या किया जाय । डॉक्टर साहब के घर रहते मुन्नू को कौन हटा सकता है ? काज़ीजी का लड़का मौला, अब उसे देखकर दुम दबाए भागकर मसजिद में घुस जाता ।

पर मुन्नू का वैसा आदर घर में न था । आखिर वह एक अनाथ लड़का ही तो था, और यहाँ उसका पालन होता था ; इससे घर में उसका दर्जा नीचा था । कुछ दिन तो डॉक्टरनी साहबा का रोष न उतरा । वे उसके लम्बे-लम्बे ओठों को, घुटे हुए सिर को, और पकौड़ी-जैसी टूँड़ी को नहीं देखना चाहती थीं । इसलिए, उसे खिलाने-पिलाने का काम रानी के सिपुर्द कर दिया

गया था। उनका यह खयाल भी था कि रानी को यह सब सीखना चाहिए ; क्योंकि ससुराल में यह सब काम उसे करने पड़ेंगे। रोटी खाने के समय ही दोनों वक्त उसे बुलाया जाता। बाकी समय में वह मरीज़ों के कमरे में पड़ा रहे, चाहे बाहर के मैदान में बरगद के वृक्ष के नीचे, या भाड़ में जाय! घर के भीतर डॉक्टरनी उसकी सूरत नहीं देखना चाहती थीं। डॉक्टर साहब ने भी इसमें दखल देना उचित न समझा। उनका ख़याल था, कुछ कहने से कहीं घर में व्यर्थ ही तूफ़ान न खड़ा हो जाय। जब वे शाम को बगीची में आराम कुरसी पर आराम करने लगते, तब मुन्नू को जो कुछ समझाना होता, समझा देते।

डॉक्टर साहब के यहाँ, जब नाज़िम साहब के घर से उनकी श्रीमती तशरीफ लातीं, तब डाक्टरनी उनसे अपना सारा क़िस्सा रो सुनातीं। दोनों ही अपने-अपने पति के स्वभाव का वर्णन करतीं, उनकी त्रुटियों का वर्णन करतीं और एक दूसरे को सान्त्वना देतीं।

पर डाक्टरनीजी का यह स्वभाव था कि उनके सामने जो बात पेश की जाती, पहले उसका वे अवश्य विरोध करतीं—चाहे वह अच्छी हो, चाहे बुरी। पर, धीरे-धीरे वे खुद ही उसे मानने को तैयार हो जातीं। चार्ल्स डिकन्स की एक हिन्दी अनुवादित कहानी पढ़, आपके हृदय में गरीबों के प्रति सहानुभूति बढ़ने लगी थी, और आप अब मुन्नू से अधिक घृणा न करती थीं ; पर साथ ही वे इस बात को प्रकट न करना चाहती थीं। कभी-कभी वे सोचने लगतीं—चलने दो, इसमें मेरा क्या बिगड़ता है, कौन मेरे साथ

खाने बैठता है, कौन मेरी पूँजी खर्च होती है ! और उसके और कोई है भी तो नहीं। पड़ा रहेगा बेचारा। और इसीलिए आप डॉक्टर साहब से इसके विषय में कुछ न कहतीं।

पर बच्चों के हृदय बड़े पवित्र होते हैं, बड़े भोले, बड़े सीधे। शैशव काल ही पवित्रता का, प्रेम का और सरलता का मध्याह्न होता है। इसी काल में संसार के अनोखे आनन्द निर्दोषता से लूटे जाते हैं। शैल, कल्लू, मुन्नू और ठाकुर की लड़की पारबती में बड़ी मैत्री थी। एक दिन दोपहर को जब 'टूँड़ा' सो रहा था और जब शैल ने बाल-कौतूहल वश, खेलते-खेलते उसकी टूँड़ी में सुई चुभो दी थी और जब वह खूब जोर से रोया था, तब उस दिन शैल ने उसे गले लगा लिया था। सिर पर हाथ फेर कर पुचकारा था। तभी से शैल घर और बाहर सब जगह उसका पक्ष लेने लगा था। उसके बिना खेलने ही न जाता। दोपहर के समय, जब डॉक्टर साहब सो जाते, तब चारों मित्र गाँव किनारे की अमराई में केरियाँ तोड़ने चले जाते और दोपहर भर वहीं आम्र वृक्षों की शीतल छाया में घास पर बैठ, नोन के साथ कच्चे आमों को खाकर अपनी गार्डनपार्टी का आनन्द लिया करते थे।

कभी-कभी जब जंगल से कई गाड़ियाँ लकड़ी आकर छत पर पड़ जातीं, तब वे लकड़ियों से घर और महल बनाकर उसमें रहते—'राजा-राजा' खेलते और खरबूजा काटकर एक ही पात्र में खाते।

शैल बच्चा था; पर बच्चे भी बड़े चतुर होते हैं। शुरू में

तो वह अपनी माता के सामने मुन्नू से बातें करने का भी साहस न करता ; पर जब उसने देखा, कि माताजी ने कुछ रुख बदल दिया है, तब एक दिन वह मुन्नू को भीतर ले गया। शाम को रोटी खा लेने के बाद सब लड़के खेतों की ओर हवाखोरी के लिए निकल गये थे। लौट कर, मुन्नू का हाथ खींच, शैल उसे घर में ले जाने लगा।

'उँहुँक, मैं न जाऊँगा।'—मुन्नू हाथ छुड़ाता हुआ बोला।

'नहीं, चलो।'—शैल ने हाथ खींचते हुए कहा।

'अले याल, तलो तो थही'—कल्लू हठ करने लगा।

यह क्या खींचा-तानी हो रही है भैया !'—गाँव की एक पनि-हारी अस्पताल के पीछे के कुँए से सिर पर पानी का घड़ा ले जाती हुई बोली।

'तुथ भी नहीं दो।'—कल्लू ने जवाब दे दिया।

डाक्टरनीजी आँगन में खाट पर लेटी हुई थीं। छिटकी हुई चाँदनी श्वेत बादलों से खेल रही थी।

शैल अपनी माँ की खाट पर बैठ गया। कल्लू दूसरी एक खाट पर बैठा। मुन्नू खड़ा हो रहा। शैल धीरे-धीरे माँ के पास सरक, आँचल में मुँह छिपा, झूठ-मूठ रोने लगा।

'क्यों शैल ?'—कहते हुए माताजी ने लेटे-ही-लेटे उसे अपनी छाती से लगा लिया। शैल रोना छोड़ माता की ओर हँसता हुआ देखने लगा।

'बदमाश !'—कह माता ने एक हलकी-सी चपत जमा दी। शैल हँसता हुआ उठ बैठा और माताजी के पैर दाबने लगा।

'मुन्नू, तू भी तो दाब ।'

मुन्नू निकट आगया। माताजी कुछ न बोलीं । मुन्नू खड़े-खड़े ही पैर दाबने लगा ।

'और कल्लू तू ?'—शैल ने फिर कहा ।

वह भी खाट पर आ पैर दाबने लगा। माताजी चुपचाप सोती रहीं ।

'अम्माँ और दावूँ ?'

'पर आज यह सब क्यों हो रहा है ?'

'कुछ नहीं, यों ही ।'

'अमें तो पैल दाबना अत्ता लत्ता है ।'

'अम्माँ ! ये क्यों पैर दबा रहे हैं, जानती हो ?'—रानी खाट पर बैठती पानी पिये मुँह को आँचल से पोंछती हुई बोली ।

'नहीं ।'

'कल इनकी सैल होने वाली है ! इससे ये पैसा चाहते हैं । इसी से सब खुशामद कर रहे हैं ।'

'रहने दो जीजी, झूठ क्यों बोलती हो ! हम पैसों के लिए थोड़े ही पैर दाब रहे हैं ।'

माताजी आज कुछ न बोलीं । ऐसा मालूम हो रहा था, जैसे आज वे प्रसन्न हैं । सब अपने-अपने भाग्य को सराहने लगे।

'चन्दा मामा ! ओ चन्दा मामा !'—शैल ने बात उड़ाने का प्रयत्न करते हुए कहा ।

'अरे रानी !'—माताजी ने लेटे हुए कहा ।

'जी।'

'जा, टिरंक में से तीन पैसे और वह रस्सी ले आ।'—रस्सी का नाम सुनते ही मुन्नू काँपने लगा। रोने लगा। अभी रोने की आदत न गई थी। रानीर रस्सी और पैसे ले आई। माताजी उठकर खाट पर बैठ गईं। हाथ की रस्सी देख, मुन्नू और रोने लगा।

'अरे रोता क्यों है, इधर आ।'

वह रोता-रोता पास गया।

'ले'—कह माताजी ने उसे पैसा दिया। फिर दोनों को भी दे दिया।

पैसे मिलते ही, सब प्रसन्नता से नाचने लगे। फिर तीनों बाहर ठाकुर के घर के पास जा, आँगन में खाट पर बैठी कुछ खा रही पारबती को बड़ी देर तक पैसा दिखा-दिखाकर चिढ़ाते रहे।

६

मुन्नू को भाग्यवान लड़का कहना चाहिए। उसके जैसे एक अनाथ बालक को इस प्रकार दोनों समय सुख-चैन से रोटी खाने को मिले, साफ कपड़ा पहनने को मिले, और स्कूल में पढ़ने का अवसर प्राप्त हो—इससे अधिक सौभाग्य और क्या हो सकता है। और यदि इस पर भी वह असंतोष प्रकट करे, तो वह मूर्ख है, अकृतज्ञ है। माना वह घर में नहीं रहता; किन्तु बीमारों के लिए बने, साफ़ कमरे में तो रहता है। और अब उसे भीतर आने जाने की भी तो रोक-टोक नहीं है। दिन भर स्कूल के बाद खेला ही करता है। एक अनाथ बालक को इससे अधिक और क्या चाहिए।

पर जीवन में खाना-पीना और खेलना ही सब कुछ नहीं होता। और फिर बाल्यकाल में तो केवल इन्हीं से काम नहीं चलता। जब मनुष्य ही संसार में प्रेम बिना अपना जीवन शुष्क और निस्सार

समझता है, उसके बिना नहीं रह सकता, तो फिर एक बालक कैसे रह सकता है। बाल-हृदय भी प्रेम के लिए तरसता है। वह प्रत्येक वस्तु में प्रेम पाने की, प्रेम पीने की चेष्टा करता है। उसके छोटे-से-छोटे खेल में, उसकी छोटी-से-छोटी चेष्टाओं में प्रेम पाया जाता है। मानों वह प्रेम की आराधना करता है। प्रेम ही बाल-हृदय में पवित्र गुणों का संचार करता है। और प्रेम ही बालक को प्रफुल्लित, पल्लवित और आनंदित कर देता है।

मुन्नू जब से यहाँ रहने लगा, तब से उसे प्यार का एक कतरा भी न मिला था, उल्टे उसके स्वतंत्र जीवन में बाधा पड़ गई थी। पर, जब से मुन्नू को शैल से प्रेम हो गया, तब से उसका जीवन प्रफुल्लित हो उठा। वह खेल-कूद में भी भाग लेने लगा।

शैल, कल्लू और मुन्नू तीनों साथ-साथ पाठशाला जाते। असंस्कारी बालक में विद्या का प्रवेश होना कठिन था। जब मास्टर साहब डाटते, तभी मुन्नू अक्षरों की ओर देखता, वर्ना क्लास की खिड़की में से नीम के नीचे गोली खेलते बालकों की ओर देखा करता, या दीवार पर टँगे चित्रों की ओर बुद्धू की नाईं ताका करता।

जब वर्ष के अन्त में परीक्षा ली गई, तो मुन्नू फेल हो गया। शैल और कल्लू दोनों पास हुए। उस दिन मुन्नू खूब रोया। रानी ने उसे पुचकारा। धीरज बँधाया। उसका रोना देख माताजी का हृदय भी पसीज गया। उसे सान्त्वना दे, तीनों को एक-एक पैसा दिया।

शैल उन्हें अपने साथ ले खेतों की सैर करने निकल गया।

घर की राह

'अले मोती! एत पेते ती दादल (गाजर) तो देना।'—माली की बगिया में माली के लड़के मोती के सामने पैसा फेंकता हुआ कल्लू बोला।

'और हमको भी देना।'—शैल और मुन्नू अपना-अपना पैसा फेंककर हरी दूब पर बैठते हुए बोले।

'लाया भैयाजी!'— मोती ने अभी बांधे हुए बैलों को चारा डालते हुए कहा उसका बाप चरसा (मोट) चला रहा था। खल-ल-ल-ल करता पानी नालियों में होकर सामने के खेत में जा रहा था। सायंकाल का मारुत हरे खेतों को नचा रहा था।

'अले दल्दी तल! पैता तो ले लिया......'

'लो भैया!'—कहता हुआ मोती सामने गाजर की क्यारी में से गाजरें खोदता, तीनों की ओर फेंकने लगा। मुन्नू उन्हें उठा, नाली के पानी में धो-धोकर शैल और कल्लू को देने लगा।

'अरे! अभी मत खाओ! हमें तो आने...'

'तो तू भी थाने लदद'—कल्लू गाजर चबाता हुआ बोला।

तीनों गाजर खाने लगे।

'अले, बत? थोली और दे दे।'

'नहीं भैयाजी, चार पैसे की इतनी दे दीं'—मोती अपने हाथ धोता हुआ बोला।

गाजर खा दिन डूबे तक सब वहीं खेलते रहे। जब पारबती उन्हें बुलाने आई, तब उसे उन्होंने गाजर के पत्ते दिखाकर खूब चिढ़ाया। फिर चार-पाँच गाजरें, जो उसके लिए रक्खी थीं, उसे

दे दी गई और चारों मित्र, एक दूसरे से बातें करते गर्व से अपने गाजर खाने के ढंग और परिमाण का वर्णन करते घर को चल दिये।

इसी प्रकार समय व्यतीत होता गया। विद्यादेवी मुन्नू से प्रसन्न होती न दिखाई दीं। और जब देखा कि मुन्नू नहीं पढ़ सकता, तब डॉक्टर साहब ने उसे घर के काम में लगा दिया। डाक्टरनी इससे प्रसन्न हो उठीं। उसे अब घर का झाड़ना-बुहारना भी करना पड़ता। डॉक्टर साहब बिलकुल ही उसका स्कूल नहीं छुड़ाना चाहते थे, इससे वह स्कूल भी जाता और घर का काम भी करता; पर घर के काम-काज में उसका दिल न लगता। इससे शाम को स्कूल से आ, ज्यों-त्यों थोड़ा-बहुत काम कर वह खेलने चला जाता। ये तीनों, गाँव के अन्य लड़कों के साथ गेंद-मार धौंसा या गुल्ली-डंडा खेला करते। डाक्टरनी साहबा बहुधा इससे नाराज़ हो जातीं। कभी-कभी तो तीनों को उनकी घुड़कियाँ सहनी पड़तीं। तब मुन्नू रोता-रोता बाहर चला जाता और कोयला उठा अपना नाम दीवार पर लिखा करता, और न जाने क्या लकीरें खींचा करता।

बालाजी का मन्दिर एक छोटी-सी टेकरी पर है। हनूमानजी की एक जीर्ण मूर्ति यहाँ पर खड़ी है। गाँव के भक्त लोग कभी-कभी यहाँ पर 'दर्शन' करने आते हैं। सेठजी की बगीची, इस जगह से आधा मील है और बालाजी जाने का रास्ता, सेठजी की बगीची और नीचे बहती नदी के पास होकर जाता है। बगीची भी एक छोटी-सी टेकरी पर है। चन्द्र-प्रकाश में बगीची के लम्बे-

लम्बे बाँसों का प्रतिबिंब, नीचे कल्लोल करती नदी में पड़ता है। चट्टानों के ऊपर कलरव करती, चन्द्र और तारकों को अपने आँचल में छिपाती, नदी मन्द गति से चक्कर लगाती बहती चली जाती है।

बगीची में दो-तीन संगमरमर की छत्रियाँ बनी हुई हैं और आज डॉक्टर साहब के लिए यहाँ पर कण्डे—उपले—सुलगाकर महाराज लड्डू-बाटी बना रहे हैं। मन्दिर के नीचे के मैदान में बड़ के नीचे उपले दहक रहे हैं। सामने ही तीन पक्के कमरे बने हुए हैं और ऊपर की छत पर ही चाँदनी में आज लड्डू-बाटी उड़ेंगे। डाक्टर साहब के साथ सब लोग बालाजी का दर्शन करने जा रहे हैं। बड़ के ऊपर से चाँद झाँक रहा है।

'अले याल थैल बाबू ! हम तो पोथे ही लेंगे।'—कल्लू ने पीछे से शैल का कोट खींचते हुए कहा। कल्लू अब बारह-तेरह वर्ष का हो गया था, फिर भी वह अभी तक हकलाता था।

'अच्छा तो मुन्नू से भी कहो।'—शैल ने मुन्नू की ओर संकेत करके कहा। डॉक्टर साहब और श्रीमतीजी बातें करते आगे जा रहे थे। रानी मुन्नू से बातें कर रही थी।

'मुन्नू !'—रानी ने कहा।

'जी।'—वह बोला।

'तुम मेरे लिए, अच्छी-अच्छी सीपियाँ नदी में से बीन लाओगे ?'—रानी ने हँसते-हँसते पूछा।

'हाँ जरूर, जरूर बीन लाऊँगा ; पर मैं डूब जाऊँ तब ?'

मुन्नू इन तीन-चार वर्षों में थोड़ी बहुत सभ्यता सीख गया था। अब वह पहली कक्षा में पढ़ता था।

'बगीची के पास तो थोड़ा ही पानी है मुन्नू, घुटने के बराबर भी तो नहीं।'—रानी ने उसे समझाते हुए कहा।

'अच्छा, तो ले आऊँगा। सीपियाँ लाऊँ कि शंख?'

'सभी ले आना। देख छोटे-छोटे शंख, और गोल-गोल शिव-लिंगी जैसे काले पत्थर, और सीपियाँ—ये सब। हम पूजा करेंगे, समझा?'—रानी ने अपनी प्रसन्नता को इन शब्दों में प्रकट करते हुए कहा। पीछे से कल्लू ने मुन्नू का कुरता खींचा।

'क्या है?'—मुन्नू ने पूछा।

'बला लात थाब बनता है तू तो! इधल आ!'

मुन्नू रुक गया। रानी मन-ही-मन गाना गुनगुनाती, ऊपर बगीची के बाँस, नारंगी और अमरूद के वृक्षों को देखती, कभी श्वेत सरिता की ओर दृष्टि डालती, कभी नीलाकाश में असंख्य तारागणों के मध्य विचरते चंद्र की ओर दृष्टिपात करती, कभी नदी की बालू में से, शंख या गोल-गोल पत्थर उठाती चलने लगी। तीनों मित्र पीछे रह गये। बालू में बैठ हाथों से बालू उछालने लगे।

'ऐ शैल!'—आगे से आवाज़ आई।

'जी।'

'अरे वहाँ क्यों बैठा है?'—डाक्टरनी साहबा ने पूछा।

'यों ही, खेल रहे हैं अम्माँ।'

'नहीं, वहाँ मत खेलो। आगे आओ, बगीची के फाटक के सामने

खेलना ।'—माताजी के आदेश का पालन करने सब चल दिये ।

सेठजी की बगीची, बगीची न थी, उसे बगीचा कहना उचित होगा। वह इतनी बड़ी थी ; पर उसका नाम गाँव में 'सेठ की बगीची' ही पड़ गया था। बाँस के बड़े फाटक-द्वारा डाक्टर साहब बगीची में चले गये। रानी रुक गई और फाटक के सामने बालू पर बैठ गई। वे तीनों भी बालू में बैठे नदी के धीमें बहाव को देख रहे थे।

'कल्लू, अब तो नहाना चाहिए !'

'हाँ भैया, नाना चाइए।'

'क्यों मुन्नू ! नहाओगे ? हमारे मास्टर साहब ने कहानी में कहा था—है न वैसी ही यह नदी, देख वह पत्ता जा रहा है'—शैल दोनों मित्रों को पानी में बहता बड़ का पत्ता दिखाते हुए बोल उठा।

'माताजी आज्ञा दें तब !'—मुन्नू ने आनंद में विघ्न डाला।

'इसमें पूछने की क्या बात है।'—शैल ने मुँह बनाते हुए कहा।

'नहीं मॉताद्‌दी आल बाबूदी थे पूथ लो।'

'अच्छा तो मैं पूछने जाता हूँ।'—कहकर शैल उठा और फाटक की तरफ चल दिया। फिर कुछ विचार आते ही रुक गया, और रानी के पास—जो बालू में लेटी आकाश की ओर देख रही थी—चला गया।

'जीजी !'

'क्यों ?'—तन्द्रा भंग होते ही रानी ने पूछा।

'तू नहाएगी ?'

'कहाँ ? क्यों ?'—रानी हँसी दबाते बोली।

'नदी में और कहाँ ? चलो न जीजी हम लोग नहाएँ।'—रानी का हाथ पकड़ कर उठाते हुए शैल ने कहा।

'मैं नहीं नहाऊँगी, तूही नहा।'

'क्यों ?'

'मेरी इच्छा नहीं है।'

'चलो जीजी, बड़ा मजा आयगा, माताजी से पूछ आओ !'

'तो यह क्यों नहीं कहता ?'—हँसते हुए रानी ने कहा।

'क्या है बेटी ?'—बगीची की छत के ऊपर से डॉक्टर साहब ने पूछा।

'पिताजी, शैल नदी में नहाने को कहता है।'

'बीमार होना है क्या ? ठंड लग जायगी !'—माताजी ने बीच ही में कहा। शैल गुमसुम होकर खड़ा रह गया।

'अच्छा, जाओ नहाओ। जल्दी नहा लेना। ज्यादा देर मत करना।'—डॉक्टर साहब ने कहा।

'मेरी तो कोई सुनता ही नहीं ! बीमार पड़ जायँगे तब ? शैल, तू मत नहाना।'—माताजी ने आदेश देते हुए कहा। सब बालक सन्न-से खड़े रह गये।

'अच्छा, नहा आओ। जल्दी करना।'—माताजी ने सबको आज्ञा दे दी।

बस फिर क्या था ! तीनों मित्र एक दूसरे से लिपटते, नाचते-कूदते, अपने कुर्ते उतार-उतार बालू में फेंकने लगे।

'जीजी, ले यह कुरता।'—कुर्ता फेंकते हुए शैल ने कहा—'तू भी नहा।'

'आप ही नहाइए।'—कुरता लेते हुए रानी बोली।

'मुन्नू!'—रानी ने पुकारा।

'जी।'

मुन्नू और रानी में घनिष्ठता हो चली थी, जो माताजी को पसन्द न थी।

'देख भूलना मत!'

'नहीं, नहीं।'

तीनों मित्र दौड़ते-दौड़ते पानी में कूद पड़े, और हाथों से पानी उछाल एक दूसरे को भिगोने लगे। कभी पानी में दौड़ते-दौड़ते पैरों से पानी उछालते, कभी चन्दा मामा को पानी में नहाने का आमन्त्रण देते, कभी एक दूसरे को डुबकियाँ देते, कभी बड़े तैराकों की भाँति तैरने का स्वाँग रचते।

'देखो मुन्नू हमें छुओ।'—शैल ने मुन्नू से कहा। वह झुक-कर नदी में से कुछ बीन-बान कर अपनी धोती में रख रहा था। उसने न सुना।

'ऐ बुद्धू! सुनता नहीं?'—शैल ने फिर से कहा।

बुद्धू! ऐ बुद्धू!! और शैल ने कहा बुद्धू!—उसके हृदय को अत्यन्त आघात पहुँचा। पानी में से निकल वह रानी के पास चला गया और अपना संग्रह निकाल रानी को दिखाने लगा। शैल समझ गया।

'मुन्नू! आओ, नाराज़ मत होओ भई।'

'बस, अब मैं नहा चुका।'

'तो तुमसे नहीं बोलते, जाओ!'

मुन्नू का हृदय पिघल गया। वह फिर नहाने लगा। डॉक्टर साहब और श्रीमतीजी, ऊपर छत पर बैठे-बैठे यह सब दृश्य देख रहे थे। चाँदनी में, कलरव करती नदी में, यह बाल-क्रीड़ा कितनी सुन्दर लगती है!—डाक्टर सोचने लगे।

'चलो, हम भी नहाएँ?'

'रहने दो, हम क्या अच्छे लगेंगे!'

'वाह यह खूब कहा!'

'नहीं मैं न नहाऊँगी, आप ही नहाइए।'

डाक्टर साहब ने स्नान किया। माताजी के आदेश ने फिर सबको अपने-अपने स्थान पर बुला लिया।

'मुन्नू।'

'जी।'

'तुम बड़े अच्छे हो, कैसी अच्छी-अच्छी सीपियाँ तुम ले आये! आज तुम्हें लड्डू खिलाऊँगी।'—रानी एक-एक सीप को भली भाँति देखती हुई बोली।

कितने मीठे शब्द थे यह। मुन्नू का हृदय प्रेम से भर गया।

'जीजी!'—उसके जीवन में आज ही उसने रानी से 'जीजी' कहा—'जीजी!'—वह फिर से बोला।

'क्या मुन्नू?'

'जीजी ! तुम मुझे हमेशा इसी प्रकार प्यार करोगी ? मैं तुम्हारे ही पास रहूँगा !'

'मुन्नू ! मैं तुझे कैसे भूलूँगी ?'

'पर मुझे रह-रह कर शक होता है कि तुम मुझे भूल जाओगी ! मुझसे बोलना छोड़ दोगी, तब मैं क्या करूँगा ? जीजी !......'

'चल पागल !'— कह रानी ने उसकी ओर हँस दिया।

'रानी ! चलो ऊपर आओ।'—माताजी ने आदेश किया। सब-के-सब ऊपर चले गये।

'महराज !'—छत पर से डॉक्टर साहब ने आवाज़ दी।

'जी।'

'चलो ठाकुर से कहो, कि पत्तल धोकर लाये।'

'लाया हजूर !'—ठाकुर पत्तलें धोता हुआ बोला।

ठाकुर और उसकी लड़की पारबती, अभी ही बालाजी से पूजन की सामग्री लेकर आये थे।

दरी बिछाई गई। सब दरी पर बैठ गये।

पत्तल और दोने रक्खे गये। लड्डू, बाटी, दाल आलू और बैंगन का शाक और रायता परोसा गया। सामने ही मुन्नू और पारबती बैठ गये। दूसरी तरफ कल्लू बैठा।

नभ-मण्डल में विचरते चन्द्र को आलिंगन करने की चेष्टा करता, बरगद की शिखाओं पर से एक मोर बोला। आस-पास के वृक्षों पर से और भी मोर बोल उठे।

'भोजन होने लगा। रानी सबसे पहले उठकर परोसने लगी। लड्डू रक्खूँ ? रायता रक्खूँ ?' वह सबसे पूछने लगी।

'रानी जीजी !'

'दी।'—रानी हँसती हुई बोली। कल्लू कुछ न बोला। रानी समझ गई, और कल्लू की पत्तल में एक लड्डू रख आई।

'मुन्नू तू लेगा ?'

'नहीं जीजी !'—हाथ हिलाते हुए मुन्नू ने कहा।

रानी ने धीरे से उसकी पत्तल में एक लड्डू रख दिया।

'उसका पेट फाड़ डालोगी क्या ?'—माताजी बोल उठीं।

रानी कुछ न बोली। चुपचाप रायता परोसने चली गई।

'मुन्नू !'—माताजी ने आवाज़ दी।

'जी !'

'हाथ धोकर प्याला रकाबी माँज डालना।'

'जी, अच्छा।'

भोजन के पश्चात् मुन्नू रकाबी गिलास इत्यादि बड़ के नीचे माँजने लगा। शैल और कल्लू बड़ के आसपास 'धूप-छाया' खेलने लगे।

'बल ते दोदे (गोदे) थाँय दे ?'

'हाँ यार !'—शैल ने कहा !

'तलो ता तल दाँय।'

'चलो !'

दोनों बच्चे मन्दिर के चबूतरे पर से बड़ की एक डाली पर चढ़ गये और गोदे खाने लगे ।

'उस चाँद को भी तो दो ।'—डालियों में से दीखते चाँद को दिखाते हुए कल्लू ने कहा ।

'और उस नदी को नहीं ?'—शैल ने नदी की ओर संकेत करते हुए कहा । दोनों गोदों को तोड़-तोड़ आकाश में चाँद और नदी की तरफ फेंकने लगे ।

'मुन्नू ! तुम भी ऊपर आओ !'

'मैं काम कर रहा हूँ ।'—मुन्नू ने अपनी विवशता प्रकट की ।

'नहीं, आओ !'

मुन्नू पिघल गया, दो गिलास बिना मँजे छोड़ कर, बड़ के ऊपर चढ़ने लगा । तीनों के बोझ से डाली चर्राती हुई टूटी, और तीनों को साथ ले नदी में फेंकने को चल दी । धम्म से आवाज हुई ।

'क्या हुआ !'—डॉक्टर साहब चिल्ला पड़े । देखा—मुन्नू नदी में पड़ा है । कल्लू रेतो में और शैल नदी में एक चट्टान पर । डॉक्टर साहब दौड़े-दौड़े फाटक के बाहर आ गये । देखा—शैल के सिर में से रक्त की धाराएँ वह रही हैं । मुन्नू के सिर में और पैर में चोट लगी है ।

'हाय भगवान् ! हत्यारे ने मार डाला मेरे बच्चे को !'—डॉक्टरनी रोती हुई बोलीं ।

'क्यों महराज ! यह कैसे गिर पड़े ? क्या आँखें फूट गई थीं तुम्हारी ? क्यों इन्हें ऊपर चढ़ने दिया ?'—डॉक्टर शैल को

उठाते हुए बोले। शैल अचेत पड़ा था। मुन्नू को कुछ होश था। कल्लू को चोट न लगी थी। वह बालू में खड़ा, थर-थर काँप रहा था।

'साब मैंने मना किया; पर किसी ने न माना। क्यों ठाकुर!'— महराज घिघियाते हुए बोले।

'पर यह डाली कैसे टूटी?'

'साब, शैल बाबू और कल्लू दोनों डाली पर बैठे थे, फिर मुन्नू भी चढ़ गया और उसके बोझ से डाली टूट पड़ी।'

रानी अब काँपने लगी।

'हाय रे! हत्यारे ने मार डाला मेरे बच्चे को।'—डॉक्टरनी शैल को गोद में लेती सहलाती हुई बोलीं।

'पाजियो, बदमाशो! शरारत करते हो!'—डॉक्टर साहब ने रोष में भर कर कहा।

'करो काला मुँह इसका! अब अपने घर में न रक्खूँगी इसे। मेरे बच्चे का प्रान लेगा, तभी यहाँ मरेगा!'—डाक्टरनीजी के क्रोध का पारा चढ़ने लगा।

'नालायको!'—कह डाक्टर साहब ने मुन्नू को पीट दिया। एकाध चपत कल्लू को भी लगाया।

रानी अपने आँचल से आँसू पोंछने लगी। मुन्नू तड़प-तड़प-कर रोने लगा। डॉक्टर साहब का क्रोध बहुत बुरा था।

'तुम सब नौकर भी नालायक हो। क्यों तुमने इन्हें ऊपर चढ़ने दिया! उल्लू के पट्ठे, कहीं के!'—कोई कुछ न बोल सका।

डाक्टर साहब ने पट्टी बाँधी और एक घण्टे में सब-के-सब जितने आनन्द में आये थे, उतने ही शोक में घर की ओर चल दिये।

श्वेत बादलों के पट से चाँद ने एक अनोखा हास्य किया। उस हास्य ने उस बट वृक्ष को, बगीची को और एक जगह रक्त मिले नदी के जल को रँग दिया। मानों वह उन मनुष्यों पर हँस रहा हो, जो सांसारिक वस्तुओं को, भौतिक शरीर को, महत्व-पूर्ण समझ उसे महत्व देकर, अपने सुख में, अपने आनन्द में बाधा डाल उद्वेग में पड़ जाते हैं और औरों को भी डाल देते हैं।

७

अभी तक शैल का घाव न भरा। वह घर में खाट पर पड़ा रहता है। मुन्नू से वह नहीं बोलता—नहीं बोल सकता। माताजी का यह आदेश है।

मुन्नू दिन भर मरीजों वाले कमरे में खाट पर पड़ा कराहता है। उसको कोई नहीं पूछता। उसका घाव भी अभी तक नहीं भरा है। लोहे की खाट पर पड़ा-पड़ा कभी वह आंसू बहाता है, कभी कोयला उठा, नीचे पत्थर के फर्श पर न जाने क्या-क्या चित्र बनाया और मिटाया करता है।

वह अब नितान्त बालक न था। उस रात से, जब शैल और वे सब बड़ की डाली से गिर पड़े थे, माताजी इतनी क्रोधित थीं, और डॉक्टर साहब ने उसे इतना पीटा था, कि उसके जीवन में अजीब परिवर्तन हो गया था। मुन्नू अब अपने बाल-सखा से

मिल भी न सकता था। वह दुःखी और उदास रहता। माताजी भी अब उसकी ओर कड़ी दृष्टि से देखती थीं। जब वह दोनों समय भोजन करने जाता, तब माताजी कुछ-न-कुछ कह कर उसके हृदय को बेधा करतीं। वह शैल से मिलने की चेष्टा करता; पर अवसर कभी न मिलता—माताजी उस समय शैल की खाट पर बैठी होतीं। यही कारण था कि मुन्नू इतना उदास रहता, न किसी से बोलता, न खेलता-कूदता। कल्लू उस दिन से इतना डर गया था कि वह अब शैल के पास आने की हिम्मत ही न करता था। तब फिर वह मुन्नू के पास क्यों आने लगा?

रानी भी माताजी से बहुत डरती। ससुराल जानेवाली 'बड़े घर' की लड़कियों के लिए घर के लोगों के सिवा और किसी से बात करना ठीक नहीं और फिर मुन्नू से, एक नौकर से, एक अछूत से उसे क्यों बोलना चाहिए? फिर भी रानी आँख बचा कर, मुन्नू को एक रोटी अधिक दे देती और जब वह अधिक रोता, चुपके से उससे दो मीठी बातें कर शान्त कर आती। इससे अधिक वह न कर सकती और करना अच्छा भी न था; क्योंकि माताजी के क्रोध से वह वाकिफ थी।

एक नीच जात का लड़का उनके बेटे को मार डालने की चेष्टा करे, उसे वे कैसे घर में रहने दें? यही क्या कम था कि अभी तक उन्होंने उसे अपने घर में रखा। पेट भर भोजन दिया। नहीं तो कभी का ससुरे को घर के बाहर निकाल दिया होता। ससुरे का पेट भी तो नहीं फटता। बच्चा तो घर में खटिया पर

पड़ा है और उसे चाहिए बारह-बारह रोटियाँ ! डॉक्टरनी साहबा इसी प्रकार मन-ही-मन झुँझलाया करतीं ।

एक दिन शाम को मुन्नू अस्पताल के कम्पाउंड में खाट पर पड़ा था । वह खाट न थी, झोली थी । वह अपनी विचार-तरंगों में डूबा था—अतीत बाल-जीवन को याद कर रहा था ।

उस दिन की, जब कि शैल ने उसके टूँड़ी में सूई चुभो दी थी, वह रोने लगा था, और शैल ने बड़े प्रेम से उसे गले लगा लिया था । वह भी क्या जीवन था ! कितना आनन्द मय ! कितना सुख मय ! और आज ?...उसके नेत्रों से आँसू टपकने लगे ।

'मुन्नू !'—मुन्नू चौंक पड़ा । जीजी ने आज उसे इतनी जोर से, इतना प्रेम से क्यों पुकारा ? इस प्रकार तो कभी नहीं पुकारा था !

'जी !'—मुन्नू रानी के मुँह की ओर देखता हुआ बोला ।

'चलो रोटी खाने ।'

'माताजी ने कह दिया ?'

'हाँ, चलो ।'

मुन्नू चल दिया । अन्दर आँगन में खाट पर शैल लेटा हुआ था । आज खाट पर माताजी न थीं ।

'जीजी ! माताजी नहीं हैं ?'—मुन्नू ने पूछा ।

'नहीं, वे पारबती को देखने गई हैं !'

'क्यों ?'

'उसे चार दिन से बुखार आ रहा है ।'

'ऐं ! पारबती को बुखार आ रहा है जीजी ?'

'हाँ। अब तुम शामको खेलने नहीं जाते ; इसलिए तुम्हें नहीं मालूम ।'—रानी मुन्नू को परोसती हुई बोली ।

मुन्नू कुछ न बोला ।

'चुप क्यों हो गया मुन्नू ?'

'कुछ नहीं ।'

'अरे ! रोता क्यों है ?'

'कहाँ रोता हूँ जीजी ।'

वह शैल की खाट के पास बैठ गया ।

'शैल भैया, अब कैसे हो ?'

'मुन्नू !'...—शैल एक धीमी हँसी हँसता हुआ बोला ।

'हाँ भैया, अच्छे हो न ?'

'हाँ ।'

तुम मुझसे नाराज़ हो—मुझे माफ़ न करोगे ?

'माफ़ ! माफ़ कैसा ?'

'मैंने तुम्हें गिराया था ।'

'तुमने कहाँ गिराया, हमी ने तो तुम्हें ऊपर बुलाया था । हम न बुलाते, तो डाली टूटती ही क्यों ! भूल जाओ उस बात को मुन्नू ।'—शैल अधीरता से बोला ।

'क्या कर रहा है रे वहाँ ? अब भी शरम नहीं आती ? हट वहाँ से ।'—माताजी ने भीतर आते हुए कहा । मुन्नू चुपचाप जाकर खाने को बैठ गया ।

'यही फल होता है धरम को भिरस्ट करने का ! अभी हुआ ही क्या है, सारे घर का सत्यानास न हो जाय, तो मुझसे कहना ! मेरा कहा मानता ही कौन है ।'—डाक्टरनीजी ने साथ आई ठकुरानी को संबोधन कर कहा ।

'हाँ बहूजी, धरम की चोट बुरी होती है !'

'देखा नहीं, वह बदरीनाथ झूठ वाला, तो उसके घर में २००) रु० की चोरी हो गई ! यहाँ-का-यहीं है । एक अछूत से धरम भिरस्ट कराने का यही नतीजा होता है । हे भगवान् ! अभी न जाने क्या......'

'अम्माँ, अब रहने भी दो ! शैल के लिए दूध...'—रानी ने कुछ दुखित स्वर में कहा ।

'चूल्हे में जाय तेरा दूध ! कल को लड़कियाँ मुझे समझाने चली हैं ! नहीं, अब इस घर में मेरा निबाह नहीं हो सकता । मैं यहाँ न रहूँगी । तुम सब रहना आनन्द में !'—डाक्टरनीजी ने आवेग से कहा ।

रानी चुपचाप रसोईघर में चली गई ।

'ओ अम्माँ, ऐसे मत बोलो, नहीं तो मैं मर जाऊँगा ।'—शैल ने कहा ।

मुन्नू का गला भर आया । वह रोटी न खा सका । आधी छोड़ उठ खड़ा हुआ ।

'क्यों रे ! रोटियाँ मुफ्त में आती हैं क्या ?'—माताजी गरज उठीं ।

'भूख नहीं है अम्माँजी।'

'तो माँगी क्यों?'

वह कुछ न बोला, बाहर चला गया और खाट पर लेटा-लेटा रोता हुआ सोचता रहा—उसी के कारण घर में इतना शोक रहता है, इतना असंतोष रहता है। रानो जीजी को भी इसी कारण इतना सुनना पड़ता है, इतना दुःख उठाना पड़ता है। उसी के कारण माताजी घर भर से नाराज़ रहती हैं।

वह वहीं पर लेटा रहा। धीरे-धीरे अन्धकार बढ़ता गया। थोड़ी देर में सामने बड़ की डालियों में से चाँद झाँकने लगा। देखते-देखते चन्द्र का उज्ज्वल प्रकाश अस्पताल के कम्पाउंड में, सामने मैदान में और बरगद के ऊपर फैल गया।

मुन्नू खाट पर लेटा-लेटा ऊपर आकाश की ओर देखता रहा—क्या करना चाहिए? इस शोक को, इस क्लेश को, इस असंतोष को मिटाने के लिए उसे क्या करना चाहिए? वही इस घर की अशान्ति का मूल कारण था। उसी के कारण माताजी और डाक्टर साहब के बीच यह कलह हुआ करता है। उसी के कारण शैल बाबू को इतना कष्ट सहना पड़ा, सिर फुड़वाना पड़ा। और अभी न जाने क्या-क्या सहना पड़े। रानी जीजी ही एक उससे प्रेम करती है, सहानुभूति प्रकट करती है। और यही कारण है, कि माताजी रानी से नाराज़ रहा करती हैं। अब यही उपाय है, कि वह यहाँ से भाग जाय। इसी से इस घर में फिर से शान्ति फैलेगी, इसी से इस घर का कलह दूर होगा।

वह खड़ा हो गया और अपना कुरता पहन अस्पताल के कम्पाउंड के बाहर आ, मैदान में बरगद के नीचे टहलने लगा। 'चीपों-चीपों' गधे ने रेंकना शुरू किया। गाँव के कुत्ते रोने लगे।

'ऐ भोंदू! क्या करता है?'—पीछे से मल्लू कहता हुआ भाग गया।

रोटी खाते समय माताजी के कहे हुए शब्द उसे याद आये। वह अछूत है। उसने उनका धरम भिरस्ट किया है; और इसी से उन पर इतना दुःख आ पड़ा है; इतनी विपत्ति आ पड़ी है, और अभी न जाने कितना कष्ट आये! वह एक दम खड़ा हो गया। क्या उसे अब यहाँ रहना चाहिए? क्या यहाँ रहना उचित है? आज तो शैल बाबू पर कष्ट आ पड़ा, कल उसकी प्यारी रानी जीजी पर आ पड़े तब? वह घबड़ा उठा। उसका हृदय दारुण दुःख से दहलने लगा। धवल ज्योत्सना से सारा मैदान, खेत और आम्र-कुंज रँगे हुए हैं; पर उन पर मुन्नू का ध्यान नहीं। वह ठाकुर के घर की ओर चल दिया।

'पारबती, कैसी हो अब?'—उसने प्रश्न किया।

'अच्छी हूँ अब मुन्नू!'—पारबती ने आँगन की खाट पर लेटे हुए कहा।

'दवाई तो हो रही होगी।'

उसे प्रतीत हुआ, मानो आज उसका हृदय द्रवीभूत हुआ जा रहा है। भंगी के घर के पास पड़ा हुआ कुत्ता मानो उसे बुला रहा है। वह कुत्ते के पास जाकर बैठ गया। उसके शरीर पर हाथ फेरने लगा।

घर की राह

'इधर कैसे आये भैया, रोटी खाली ?'—हीरा भंगी के लड़के गुल्ली ने पूछा।

'हाँ, अभी खाई है। वैसे ही चला आया।'

वह और आगे बढ़ा। घर के पीछे जामुन के नीचे कुएँ के पास आ पहुँचा। कुएँ की जगत पर खड़ा हो, कुएँ के पानी में चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब को देखने लगा। फिर विचार-तरंगें उठने लगीं। वही जामुन का वृक्ष चाँदनी में खड़ा था। यहीं वह पहले पड़ा रहता था और आज ? आज उसने ठान ली है भाग जाने की, चले जाने की, विशाल विश्व के उस कोण में, जहाँ उसका कोई अपना नहीं। विचार आते ही नेत्रों से आँसू टपक कर कुएँ के पानी में मिल जाने लगे। आज इतनी तीव्र हृदय-वेदना क्यों है ? वह व्याकुल हो उठा। कुएँ की जगत के पास एक पत्थर पर बैठ रानी जीजी का विचार करता हुआ, घर को—अपने घर को, जो अब उसका न रहेगा—देखने लगा।

'अरे ! वहाँ कौन बैठा है ?'—रानी ने घर में से निकलते हुए पूछा।

'जीजी, मैं हूँ।'

'वहाँ क्यों बैठे हो मुन्नू ?'

'यों ही जीजी, तुम बाहर कैसे आई ?'

'अम्मा नाज़िम साहब के यहाँ गई हैं। पिताजी भी साथ गये हैं।'

'कोई बीमार है ?'

'हाँ, उनकी स्त्री बीमार हैं।'

'तुम क्यों न गईं ?'

'शैल के पास कौन रहता ?'

'मैं रह जाता जीजी !'

'अच्छा, तुम यहाँ आओ।'

'नहीं जीजी, मैं यहीं बैठूँगा।'

'नहीं, यहाँ आओ।'

मुन्नू रानी की बात न टाल सका। चला गया। रानी शैल के पास खाट पर बैठ गई। मुन्नू खाट के नीचे बैठ गया।

दुःख बालक को भी बड़ा बना देता है। यही कारण था कि एक तेरह-चोदह वर्ष के बालक को बुरा-भला, सुख-दुःख समझने की इतनी शक्ति आगई थी।

'जीजी ! तुम मुझे भूल जाओगी ?'

'क्यों मुन्नू, ऐसा क्यों पूछते हो ?'—रानी पानी पीते हुए बोली।

'यों ही जीजी, मुझे अच्छा नहीं लगता। दिल में न जाने क्यों ऐसा होता है कि मैं मर जाऊँ तो अच्छा।'

'चलो, ऐसे नहीं बोला जाता।'

मुन्नू कुछ देर को चुप हो गया। फिर कहने लगा—जीजी, तुम यहीं रहोगी ?

'और क्या। आज तुम्हें क्या हुआ है ?'

'तुम यहाँ से कहीं न जाओगी, तुम्हारी शादी कहाँ.....'

'चलो चुप रहो !'

मुन्नू फिर चुप हो गया। रानी ने उसे बुलाने का बहुत प्रयत्न किया ; पर वह न बोला।

'मुन्नू !'—रानी ने पुकारा।

'जी।'

'तूने पिताजी का बिस्तर बिछा दिया ?'

'नहीं जीजी, अभी बिछाये देता हूँ।'

'रहने दे। मैं बिछा लूँगी।'

'उहुँक, माताजी नाराज़ होंगी।'

'अच्छा, तो तूही बिछा दे।'

'जीजी !'

'हाँ।'

'जीजी, क्या मैं भंगी हूँ ? क्या यह बात सच है ?'

'मुन्नू, ऐसी बातें नहीं किया करते। कौन कहता है यह ?'

'माताजी न कहती थीं ?'

'वे तो योंही झूठ-मूठ कहा करती हैं।'

'जीजी, मुझे तुम सब क्यों छूते हो ? मुझे इस घर में क्यों रक्खा है ?'

'फिर वही बात ? ऐसी बातें न कहा करो।'

'अच्छा जीजी।'

'तुम अछूत नहीं हो और यदि हो भी, तो छूने में कोई पाप नहीं।'

'पर सब तो कहते हैं—पाप है !'

'कहने दो।'

मुन्नू गद्दा लेने चला गया। गद्दा लाकर खाट पर डालता हुआ बोला—जीजी, एक बात और पूछूँ?

'हाँ, पूछो।'

'छूने से धरम भिरस्ट होता है, कि नहीं? धरम भिरस्ट होने से भगवान् दण्ड देते हैं, कि नहीं? यह बात...'

'फिर तुम वही बातें किये जाते हो, जाओ मैं तुमसे नहीं बोलती।'

'खाट पर बिस्तर बिछा दिया?'—अन्दर प्रवेश करते हुए माताजी ने प्रश्न किया।

'बिछा रहा हूँ अम्माँजी।'

'अभी तक सो रहा था क्या?'—माताजी क्रोध से बोलीं। उनका शाम का क्रोध अभी तक न उतरा था। नाज़िम साहब की स्त्री से बात-चीत करने पर तो वह और भी उत्तेजित हो उठा था। उनका कहना था, कि जब से नाज़िम साहब ने उस भंगी के लड़के का पक्ष लिया और उसके सम्बन्ध में झूठा लेक्चर दिया, तभी से उनके घर में शनिश्चर बैठ गये हैं। तभी से वह इतनी बीमार रहती हैं।

'मुफ्त का खाना ही आता है! इतना काम भी नहीं होता तुझसे?'

'माताजी कर तो रहा हूँ! अभी हुआ जाता है।'

'पाजी कहीं के, मुझसे उलझता है! सामने बोलता है!'

'क्या बात है?'—डाक्टर साहब ने अन्दर आते हुए पूछा।

देखिए इस शाहजादे को, मुझसे ही उलझता है! तुमने इसे

बहुत सिर चढ़ा रक्खा है। इस घर का सत्यानाश कर डालेगा यह !'

'क्यों, शरम नहीं आती गधे कहीं के !'—कहते हुए डॉक्टर साहब ने मुन्नू के चपतें जमा दीं।

मुन्नू गद्दा लेकर ऊपर चला गया। रानी उदास हो गई।

'क्यों बेटी, कैसे सुस्त बैठी हो ?'

'कुछ नहीं, पिताजी।'

'फिर भी ?'

'कुछ नहीं।'

मुन्नू बिस्तर बिछा कर नीचे चला आया। रोता-रोता माताजी के चरणों में गिर पड़ा।

'मुझे माफ़ करो अम्माजी।'

'देखो, माफ़ी माँगने आया है ! मेरा क्या बिगाड़ा है, जो माफ़ी दूँ। उठ यहाँ से !'

'जाओ सो जाओ अब। आयन्दा ऐसा न करना।'—डाक्टर साहब ने आदेश दिया।

'मुन्नू।'—रानी बोली।

'हाँ, जीजी।'

'जा सो जा।'

मुन्नू बाहर चला गया। अपनी लोहे की खटिया पर पड़ रहा। घण्टे भर में सर्वत्र शांति फैल गई। सब सो गये। चारों ओर निस्तब्धता, नीरवता छा गई थी। मुन्नू खाट पर से उठा।

धीरे-धीरे घर में घुसा। आँगन में शैल की खाट के पास रानी सो रही थी। चाँदनी छिटकी हुई थी। कितना पवित्र, कितना सुन्दर मुख है जीजी का! कितनी निर्मलता जीजी के मुख पर टपक रही है! कितना भोला चेहरा! कितना प्रेम-पूर्ण! कितना आनन्द-मय! वह वहीं खड़ा-खड़ा रानी को देखता रहा। फिर वहीं से जीजी को हाथ जोड़, शैल को प्रणाम कर, ऊपर छत की ओर देख डॉक्टर साहब और माताजी को वन्दना कर बाहर चला आया। मरीजों के कमरे में गया। एक फटी-सी टोपी उठाई, सिर पर रखी, और चल दिया।

बाहर मैदान में आकर खड़ा हो गया। कैसा सुन्दर दृश्य है! नीलाकाश में चन्द्र और तारागण, और कुछ श्वेत बादल के टुकड़े रुई की तरह इधर-उधर दौड़ रहे थे। नीचे विस्तृत मैदान, बीच में खड़ा बरगद का पेड़, एक ओर अस्पताल और कंपौडरजी का घर, दूसरी ओर खेत और आम्रकुंज, और थोड़ी दूर वही लंबी सड़क। जिस मैदान में बरगद के नीचे इतना खेला-कूदा, जिन आम्रकुंजों में, कड़ी धूप में शैल और कल्लू के साथ कैरियाँ खाईं, जिन खेतों में गाजरें खाईं—उन्हीं को छोड़, आज न जाने कहाँ, दूर—दूर उसे चला जाना होगा। सामने कम्पौडरजी का घर खड़ा था, जिसमें उसका बाल-सखा कल्लू रहता था; पर वह भी आज उससे नहीं बोलता। पारबती बीमार है, और शैल—ओह! जिस शैल के संग वह इतना खेला-कूदा, वह भी उसी के कारण खटिया पर पड़ा है! उससे भी वह नहीं बोल सकता।

अधिक न सोच सका। कुरते से आँखें पोंछ लीं। चन्दा मामा को प्रणाम किया; और अस्पताल को अन्तिम वन्दना कर सिसकता-सिसकता उस धूल से ढकी हुई लंबी सड़क पर चल दिया, जो मैदान के एक सिरे पर थी। चाँद ने यह देख काले बादलों में अपना मुँह छिपा लिया।

———

घर की राह

'मुन्नू अभी तक क्या कर रहा है? क्या खाट-वाट नहीं उठेगी?'--माताजी ने रानी से प्रश्न किया।

'अभी आता होगा।'

'कहो, जल्दी करे।'

'अभी कहती हूँ।'

रानी पीछे के दरवाजे से बाहर चली आई। पनहारियां घर के पीछे के कुएँ से पानी भर रही थीं।

'क्या है, किसे खोज रही हो?'--एक पनिहारी ने कहा।

'कुछ नहीं, योंही जरा...।'

'ऐ हीरा'--रानी ने हीरा भंगी को फिर पुकारा।

'सरकार, मुन्नू का तो पता नहीं है।'

'तो कहां चला गया?'

'क्या जाने सरकार! सब जगह ढूँढ़ आया।'

'अच्छा जाओ।'

'रानी।'--माताजी आरती करती हुई बोलीं।

'जी।'

'अरे तूने उससे कहा कि नहीं?'

'वह तो आंगन में नहीं है।'

'तो कहां मर गया!'

'मालूम नहीं अम्मां।'

'तुम्हीं ने उसे इतना सिर पर चढ़ा रक्खा है! जब देखो तब भाग जाता है।'

'पर वह कहीं भी नहीं है !'

'तो कहां चला गया ?'

'क्या जानें अम्मां !'

'क्या बात है ? क्यों सुबह से यह गड़बड़ मचा रक्खी है ? क्या सुबह के वक्त भी तुम लोग शान्ति नहीं रख सकते !'—डॉक्टर साहब पाखाने से निकलते ही बोल उठे।

'अच्छी बात है, मुझे क्या, तुम्हीं काम करना अब।'

'पर, बात क्या है ? काम न हुआ क्या ?'

वे कुछ भी न बोलीं।

'कहां है मुन्नू ?'—डाक्टर साहब ने फिर से प्रश्न किया।

किसी ने जवाब न दिया।

'रानी, मुन्नू कहां है ? सुनती नहीं तुम ?'—डॉक्टर साहब कड़क पड़े। वे रानी को बेटा कहकर ही पुकारते थे। कभी इस प्रकार तेज़ी से न बोले थे।

'पता नहीं पिताजी !'—रानी ने रोते-रोते कहा।

'कहां गया है ?'

'न जाने कहां ?'—रानी ने प्रत्युत्तर दिया।

स्नान किये बिना ही डॉक्टर साहब मुन्नू को खोजने अस्पताल की ओर चले गये ; पर वह वहां न मिला। माताजी पूजा में से उठकर इधर-उधर मुन्नू की तलाश करने लगीं। छाती धड़क रही थी। कहां गया होगा ? भाग तो नहीं गया ? कल रात के कठोर बर्ताव से आत्महत्या न कर ले कहीं ! आशंका होने लगी।

'हीरा, ऐ हीरा ?'—माताजी पुकारने लगीं।

'जी।'

'जा, जरा मुन्नू को देख तो।'

'हजूर, एक बार तो सब जगह देख आया, फिर जाता हूँ।'—हीरा चला गया। जामुन का वृक्ष, आस-पास के खेत, अमराई, कुँआ और बावड़ी सब देख डाला; पर मुन्नू का पता न लगा।

डॉक्टर साहब भीतर आ आग बबूला हो गये—लो अब हो जाओ राजी! तुम्हीं लोग उसके पीछे पड़े थे!

'तो हमने उसे भगा......'

'बको मत! तुम्हींने उसे तंग करके भगाया है। याद रखना इसका फल बहुत बुरा होगा!'

माताजी कुछ भी न बोलीं। रानी और शैल दोनों रोते रहे।

'ठाकुर!'—डॉक्टर साहब ने आवाज़ दी।

'आया सरकार!'—कहता हुआ ठाकुर दौड़ा आया।

'तुमने रात मुन्नू को कब देखा था ?'

'साहब आप नाज़िमजी के यहाँ गये थे, तब वह पारबती से हाल-चाल पूछ रहा था।'

'फिर ?'

'फिर हीरा भंगी के घर की ओर गया था, पारबती कहती है।'

'ऐ हीरा, इधर आओ।'

हीरा दौड़ता हुआ आया।

'मुन्नू को देखा था ?'

'कब साहब ?'

'रात को और कब ! उल्लू का पट्ठा कहीं का !'

'साहब, उधर कुएँ की ओर गया था, कहते हैं ।'

'अरे दौड़ो भाई, दौड़ो ! उसी में गिर पड़ा होगा !'—माताजी अधीर हो उठीं ।

'जाओ देखो तो, क्या गधे की तरह खड़े हो !'

'पिताजी ! पर...पर इसके बाद तो वह भीतर बिस्तर करने आया था ।'

'और बिछाकर अस्पताल के कंपाउंड में ही तो गया था !'

फिर सब जगह खोज डाला; पर मुन्नू का पता न चला । सारे घर में अशान्ति फैल गई । माताजी भी खूब रोईं । हाँ उन्हीं का अपराध था । उन्हीं ने उसे तंग करके भगाया है । यदि वे ही उसे अछूत कह कर, धरम भिरस्ट करने का अभियोग न लगातीं, उसे इतने कटुवचन न सुनातीं, तो वह काहे को भाग जाता । और किसे मालूम, न भागा हो, किसी कुएँ-बावड़ी में गिर पड़ा हो ? तब तो हत्या सिर लगेगी । माताजी उठ खड़ी हुईं और ठाकुरजी के पास जा प्रार्थना करने लगीं—हे भगवान् ! वह रात तक आ जायगा, तो परसाद बाटूँगी ।

पर भगवान् एक पैसे के परसाद से कब रीझने वाले थे ? थानेदार साहब से कहकर सिपाही दौड़ाये गये । डॉक्टर साहब ने कमेटी के दो-चार भंगियों को भी मुन्नू की तलाश करने भेजा; पर रात तक उसकी कोई खबर न मिली ।

६

उस धूल से ढँके हुए, चाँदनी में चमकते रास्ते पर मुन्नू चल दिया। उसे ज्ञान न था, वह कहाँ जा रहा है! रास्ते पर सीधा, इधर-उधर देखे बिना, चलने लगा। गांव के कुत्ते इधर-उधर फिर रहे थे, और दो-चार गधे भी खड़े थे।

वह फिर आज पांच वर्ष के बाद स्वतन्त्र था; पर कितना अन्तर था उस स्वतन्त्रता में और इसमें! तब उसे कुछ ज्ञान न था। उसे पता भी न चलता था वह सुखी है, या दुखी; पर आज? आज उसका घर उजड़ा जा रहा है। उसके लिए संसार में कोई जगह नहीं है। वह कहां जाय, कहां रहे?

पर, विचारने से क्या होता है? वह अब यहां नहीं रह सकता। यहां रहना असम्भव था। अशक्य था।

सामने रास्ते के एक ओर बाढ़ लगी थी; दूसरी ओर

किसानों के घर खड़े थे। आगे एक इमली का बड़ा पेड़ दिखा, जिस पर चमगादड़ इधर-उधर दौड़ लगा रही थीं।

एक उल्लू जोर से बोलने लगा। इमली के नीचे खड़ा हो, मुन्नू आस-पास देखने लगा। बाईं ओर श्मशान में जाने का रास्ता था। थोड़ी दूर दाहिने हाथ पुलिस का थाना था। उसी के सामने पुरानी जीर्ण धर्मशाला थी। श्मशान की ओर जाने का विचार हुआ। एक आन्तरिक शक्ति उसे वहां खींच ले गई। श्मशान चांदनी में जगमगा रहा था। कहीं राख के ढेर लगे थे, कहीं लकड़ियां पड़ी थीं, कहीं टूटे-फूटे ठीकरे, कहीं अधजले कोयले। वह एक आन्तरिक भय से कांपने लगा। कैसा भयानक स्थान है!

वह पीछे लौट पड़ा। थाना देख पैर काठ हो गये। पुलीस!—यम-जैसी पुलीस!—कोई पकड़ लेगा तब? चुपके-चुपके, धीरे-धीरे वह आगे चलने लगा।

'जागते रहो' की आवाज़ सुन वह स्तंभित हो गया। पत्थर की तरह खड़ा रह गया। फिर सचेत हो, इधर-उधर देखने लगा। कोई न था। देखा, सामने जीर्ण धर्मशाला में मुसाफिर लोग पड़े हैं। बीच चौक में एक बिस्तर पर सेठजी सो रहे हैं, पास ही दरी पर घांघरा फैलाये, सेठानीजी अचेत पड़ी हैं। दूर, एक हट्टा-कट्टा काला मनुष्य पड़ा है। और अन्य मुसाफिर भी इधर-उधर पड़े हैं। वह भी सो जाय? कहां? सराय में? नहीं, नहीं। उसे तो दूर—दूर भाग निकलना चाहिए, जहां उसे कोई

न खोज सके। नहीं तो, घर में मालूम होते ही उसके पीछे आदमी दौड़ाये जायँगे, और वह पकड़ लिया जायगा। और फिर न जानें उसकी क्या दुर्दशा होगी! वह चल पड़ा।

काले बादलों के पट में चन्द्रमा के छिप जाते ही रास्ते पर अँधेरा-सा छा जाता—बादलों के फटते ही फिर रास्ता जगमगा उठता। खेत, इमली, कैथ और नीम के वृक्ष और दूर सियार और लोमड़ियों के चीत्कार के सिवा कुछ न सुनाई देता था—न दिखाई देता था।

रात भर इसी प्रकार चलता रहा। न बैठा, न लेटा, न खड़ा रहा। पागल की तरह रास्ते पर टकटकी लगाये वह बढ़ता ही गया।

जब चांद डूबने को हुआ, मुन्नू ने अपने आसपास के वातावरण को देखा—एक बड़ के नीचे वह खड़ा है। उसकी बाईं ओर एक भयंकर वन है। सागौन के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष हिमांशु की अंतिम किरणों को स्पर्श करते खड़े हैं। बड़ से कुछ दूर एक कुँआ है। थोड़ी दूर खपरों से छाये हुए गांव के झोपड़े दिखाई देते हैं।

मुन्नू थक गया था। रात भर के परिश्रम से उसके हाथ-पैर टूटे जाते थे। पैरों में छाले पड़ गये थे। सांस रुँध गई थी। प्यास से मुँह सूख रहा था। धीरे-धीरे कुएँ के पास गया। देखा, पानी है; पर पानी खींचने का कोई साधन नहीं। अब प्यास कैसे बुझाय? वह लौट आया और बड़ के चबूतरे पर आ बैठा।

हां, घर से न भागा होता तो इतना कष्ट क्यों होता? चलते-चलते थक गया था। भूख भी जोर की लग आई थी। रानी

जीजी होतीं, तो घड़े का ठंडा जल पिलातीं। निद्रा भी आने लगी। वह बैठा-बैठा झपकियां लेने लगा।

एक हाथ में झाड़ू और दूसरे में टोकना ले, गांव के बाहर झोंपड़े में रहने वाली फुंदा भंगी की लड़की झाड़ू देने लगी। गांव का झाड़ लेने के बाद टोकना और झाड़ू आंगन में फेंक, एक लोटा उठा, वह कुएँ के हौज के पास हाथ-मुँह धोने चली गई। चंद्रमा डूब चुका था। सर्वत्र अन्धकार हो गया था। मुन्नू डर के मारे वहीं पर सिकुड़ कर पड़ रहा। उसे जरा-सा पानी मिल जाता तो कितना अच्छा होता!—इसी प्रकार विचार करते-करते वह झपकियां लेता, और फिर जाग पड़ता।

एक मोटा-सा आदमी अपनी चोटी पर हाथ फेरता, उसी बड़ के पास से हाथ में लोटा ले, जंगल की ओर चला गया।

किसी के धीमे वार्त्तालाप से मुन्नू जाग उठा। क्या उसे पकड़ने को लोग आ गये? वह चुपचाप सुनने लगा।

'आज देर से काहे आई रे?'—मोटा तुलसी महाराज अपनी तोंद पर हाथ फेरता, दूसरे हाथ से अभिनय करता एक वृक्ष के सहारे खड़ी, भंगी की लड़की चुनियां से बातें करने लगा।

'योंही!'—हँसती हुई चुनियां बोली।

'हम ही से शेखी करत है? का करत रही?'—तुलसी महाराज आगे बढ़ता हुआ बोला।

'जाओ, न बोलूँगी तुम से!'—परे हटते और रूठने का अभिनय करते हुए चुनियां ने कहा।

'अरे वाह ! ई नखरा !'—कहता अपने जनेऊ को ऊपर करता अंटी में से एक रुपया निकालता हुआ तुलसी बोला।

चुनियाँ कुछ न बोली। खड़ी रह गई।

'ले इ रुपैया ले जा !'

चुनियां हँसती हुई पास आ गई। तुलसी महाराज ने उसका एक हाथ पकड़ अपनी ओर खींचा और दूसरे हाथ में रुपया दे उसे अपनी छाती से लगा लिया।

मुन्नू को नींद में जोर से झोंका आया, और वह धम्म से चबूतरे के नीचे गिर पड़ा।

'कौन है ई ससुरा ?'—कहता हुआ तुलसी बड़ के वृक्ष की ओर झपटा।

मुन्नू जाग कर खड़ा हो गया। रोने लगा। सामने एक विशाल-काय यज्ञोपवीतधारी मूर्ति को देख वह कांपने लगा। वह डर गया, शायद साक्षात यमराज उसे ले जाने के लिए आये हैं !

'महाराज...प्यास...लगी है !'—मुन्नू नीचे बैठ कर पैर छूता हुआ बोला। उसे ध्यान न रहा कि वह एक ब्राह्मण के शरीर को—पैरों को—छू रहा है।

'दूर ! दूर रह भंगी ! हमकां छूवत है !'—तुलसी महाराज ने क्रोध से कहते हुए उसे एक ठोकर जमाई। मुन्नू वहां लुढ़क गया।

'तू इहां कहां आय मरा !'—तुलसी महाराज ने फिर से क्रोधित होते हुए कहा। दोनों हाथों को मुँह के पास ले जाता, मुन्नू पानी की याचना करने लगा। देवताजी आग बबूला हो उठे।

'बोल, कहां से आवा है तू ! ससुरे कहीं के !'––उसने दूसरी ठोकर जमाई।

चुनियां दूर खड़ी यह सब देख रही थी। इस अत्याचार को वह न देख सकी। पास आ कहने लगी––क्या है महाराज ?

'देख तो, हम कां छूवत है !'

'छू लिया, तो क्या हो गया !...'

'प्यास लगी है मुझे !—'हाथ जोड़ता हुआ मुन्नू फिर बोला।

चुनियां ने आगे कहा—क्यों मारा इसे तुमने ! मुझे छूने में तो तुम्हारा धरम न बिगड़ा, और इसे......'

चुनियां और बोलने भी न पाई थी, कि देवताजी अपनी लँगोटा सँभालते वहाँ से भाग निकले।

अरुणोदय हुआ। पूर्व दिशा में सुनहला मंद प्रकाश फैलने लगा। 'कुकड़ू कूँ ! कुकड़ू कूँ !' चुनियां के आंगन के पास दरबे में बन्द किये मुर्गे बोल उठे।

चुनियां के संकेत से मुन्नू पीछे हो लिया। नीम के नीचे आंगन की खटिया पर चुनियां बैठ गई, और मुन्नू से उसका हाल पूछने लगी। मुन्नू ने प्रथम पानी पीने का हठ किया। एक घड़े पर दो लोटे रखे थे, उसमें से एक लोटा ले चुनियाँ ने मुन्नू को पानी पिलाया। पानी पीकर जब वह स्वस्थ हुआ, तो उसने अपना हाल सुनाया।

'तू कहां जायगा अब ?'—चुनियां ने प्रश्न किया।

'जहां भगवान् ले जायगा।'

'यहां रहेगा ?'

'तुम रखोगी ? डॉक्टर साहब के आदमी और पुलिस वाले तंग करेंगे तब ?'

'हां...तो...तू रोटी खायगा ?'

'हां...नहीं...भूख तो लग रही है।'

'ले।'—कह चुनियां एक हांड़ी ले आई, और उसमें से पन्द्रह दिन के सूखे पूरियों के टुकड़े निकाल मुन्नू के सामने रख दिये। अब प्रकाश बढ़ गया था। सब वस्तुएँ साफ दीखने लग गई थीं। एक कुत्ता आकर मुन्नू के पास बैठ गया। मुन्नू उस पर हाथ फेरने लगा।

ठण्डी-ठण्डी हवा चल रही थी। नीम के फूलों की सुगन्ध चारों ओर फैली हुई थी। एक बूढ़ा दूसरी खटिया पर से उठकर हुक्का गुड़गुड़ाने लगा।

घी से चुपड़ी रोटियां खाने वाले मुन्नू के लिए फेंकी हुई पत्तलों से बीने हुए, पंद्रह दिन के सूखे टुकड़े खाना कठिन था। दो-चार टुकड़े उठा, चबा, उसने पानी पी लिया और चुनियां का मुँह ताकने लगा।

'क्या नाम है तेरा ?'

'मुन्नू।'

'ले, देख, सुबह वाली बात किसी से मत कहना !'—कहते हुए चुनियां ने एक पैसा मुन्नू के हाथ पर रख दिया।

'उहुँक, मैं पैसा न लूँगा।'—पैसा वापिस देते हुए वह बोला।

'अच्छा, तब जाओ ?'

अब यहां रहना असम्भव है--यह मुन्नू समझ गया था। फिर भी 'तब जाओ' शब्द उसे चुभने लगे। वह उठा और कुत्ते को अपने पैरों से लुढ़काता उसी रास्ते पर चल दिया, जो उसे यहां तक ले आया था। सामने फिर वही—वही धूल से ढका हुआ रास्ता था। वह उसे कहां ले जायगा ? एक अनजान विश्व में, जहां उसका कोई नहीं। इतने विशाल संसार में वह अकेला रहेगा ? चलते-चलते वह फिर सोचने लगा—जीजी उठी होंगी ; फूल तोड़ने गई होंगी ! शैल सो रहा होगा ! उसका गला भर आया। आंखों से आंसू टपक-टपक सड़क की धूल में मिलने लगे। वह और आगे बढ़ने लगा।

आम के वृक्षों पर से कोयल कुहुकने लगी। शैल के साथ खेलते आम्रकुंजों में बैठी कुहुकती कोयल की कुहुक उसे याद आ गई। एक पागल की तरह मुट्ठी बांध, वह जोर से दौड़ने लगा। कई मील तक दौड़ता ही रहा। दिन चढ़ गया था। खेतों में हल चलाते किसान लोग, इसे दौड़ता देख हँसने लगे। किसानों की स्त्रियां भी उसकी टूँड़ी को देख हँसने लगीं। छोटे बच्चे तालियां बजाते, मानों उस अनाथ—अछूत बालक को चिढ़ाने लगे ; पर उसे न रास्ते का ध्यान था, न किसानों और किसानों की स्त्रियों का, न बच्चों का, न उनके खेतों का। न जाने कहां उसका ध्यान लगा हुआ था।

सामने ही भयंकर जंगल दिखाई दिया। रास्ता छोड़ वह

उसी में घुस पड़ा। चारों ओर वृक्ष-ही-वृक्ष खड़े थे। दूर एक बरगद का पेड़ देखा, उसके आस-पास भी झाड़ियाँ थीं। उन पर लताएँ लिपटी हुई थीं। मुन्नू दौड़ता हुआ एक बड़े पत्थर से टकराया और धम्म से गिरकर अचेत हो गया।

'ए महाराज!—देखा है, तुमने उसे।'—एक थाने का सिपाही तुलसी महाराज से पूछने लगा।

'केहके?'—अपनी बड़ी-सी चुटिया पर हाथ फेरते हुए, अपने लाल अँगोछे को कन्धे पर डालते हुए, तुलसी महाराज ने पूछा।

'अरे वही साला भंगी का लड़का। जिसको डॉक्टर साहब ने रख लिया था।'

'हम नाहीं देखा भाई।'

'अरे सच कह दो, अगर देखा हो।'

'तब का हम झूठ कहत हई!'—तुलसी महाराज अपनी चोटी फटकारते हुए बोले।

'पर यार, अगर वह मिल जाय, तो दस रुपये हाथ आ जाँय!'—पहला सिपाही दूसरे से कहने लगा।

'हाँ भाई! खुदा ने चाहा, तो साला मेरे ही हाथ लगेगा।'—दूसरा सिपाही अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरता हुआ बोला।

रुपयों का नाम सुनकर सिपाही की ओर सतृष्ण दृष्टि से देखते हुए तुलसी महाराज ने कहा—बीड़ी पीवत हौ।

तुलसी ने बंडल में से बीड़ी निकाल एक-एक दोनों को दी।

'ऊ कितना बड़ा लड़कवा है ?'—तुलसी ने पूछा ।

'चलो मारो गोली !'—पहला सिपाही बोला ।

'भई, भोर में एक लड़का देखा रहा ।'

'अरे, तो बताते क्यों नहीं ?'

'बतावत हई, तनी उहर चला ।'—तीनों चुनियाँ के घर की ओर चल दिये ।

'जमादार ! दस रुपैया में से पाँच हमार भी ! याद रक्खा ।'

'हाँ, जरूर ! तुम्हें नहीं तो फिर किसे दिया जायगा ।'—दूसरा सिपाही पहले की ओर आँख का इशारा करता हुआ बोला। आँगन में चुनियाँ झाड़ू दे रही थी ।

'अरी चुनियाँ ऊ लड़कवा कहाँ है रे ?'—तुलसी महाराज ने प्रश्न किया ।

'कौन लड़का ?...'

'अरे ऊ जौन...' पर चुनियाँ के मुँह की ओर देख कर तुलसी डर गया । वह समझा, कहीं भेद की बात न खुल जाय ।

'कौन लड़का ? सिर मत खाओ, मुझे नहीं मालूम !'

'अरे इतना इतराती क्यों है ?'—दूसरा सिपाही अपने बूटों को बाँधता हुआ बोला ।

'कहीं भाग गवा होई जमादार, मारा गोली ।'—तुलसी बोल उठा ।

'हाँ तो, मारो गोली !'—पहला सिपाही चुनियाँ की ओर घूरता अपनी मूँछों पर ताव देता हुआ बोला।

'और मारो गोली साली ऐसी नौकरी को !'—दूसरे सिपाही ने बड़ी अदा से अपनी दाढ़ी सँवारते हुए कहा।

बलखाती, मुस्कराती चुनियाँ ने हँसते हुए एक कटाक्ष किया। सब उसकी अदा पर लट्टू हो गये, सब अपने-अपने भाग्य को सराहने लगे।

१०

जब मुन्नू जागा, तब रात हो चुकी थी। बड़ के घने पत्तों में से सन-सन कर हवा बह रही थी। चाँद की किरणें उसकी मुँह पर पड़ रही थीं। इस समय मुन्नू के सिर में तीव्र वेदना हो रही थी। पैरों में छाले पड़ गये थे। दो-चार जगह से खून निकल रहा था। उसके चारों ओर झाड़ियाँ और जंगल था। बिल्कुल सुन-सान। भयंकर अन्धकार पूर्ण। बनैले जानवर चीत्कार कर रहे थे। उसे डर लगने लगा। वह उठ खड़ा हुआ और रास्ता खोजता चलने लगा। कभी मोटे-मोटे पत्थरों से टकराता, तो कभी पैरों में काँटा लगने से रुक जाता; और वहीं पर बैठ काँटा निकालने लगता। वह सोचने लगा—जंगल में रहना ठीक नहीं। डर बढ़ने लगा। वह खड़ा हो गया; पर अन्धकार के कारण रास्ते का पता न चल सका।

थोड़ी दूर उसे कुछ प्रकाश-सा दिखाई दिया। उसी ओर वह चल पड़ा। इस जगह झाड़ी कम थी। चाँदनी छिटक रही थी। ऊपर देखा, आकाश में तारागण, श्वेत बादल के टुकड़े और चाँद। नीचे भयंकर वनराजि और भयानक अंधकार। फिर भी चलने का निश्चय किया। एक पगडण्डी-सी दिखाई दी। उसी पर चलने लगा। धीरे-धीरे रास्ता साफ होता गया, वृक्षों के झुंड घटते गये और आधे घण्टे में वह उसी धूल से ढकी हुई, चाँदनी में चमकती, सड़क पर आ लगा। कैसा प्रकाश है! कैसी सुहावनी चाँदनी है! और अभी-अभी कितना भयंकर अन्धकार और भयकर वन था! कोई जानवर उसे खा गया होता तो?—सोचता हुआ वह रास्ते पर चलने लगा। वही चाँदनी, खेत, कुँए और वृक्ष!—वह चलता ही रहा।

प्रातःकाल होते-होते वह एक सुंदर हरे-भरे खेत के पास आ लगा। खेतों के पास ही खपरैल के दो सुन्दर घर खड़े थे। खप-रैलों पर बेलें छाई हुई थीं। आस-पास हरे-हरे खेत लहलहा रहे थे। क्षीण चन्द्रप्रकाश में एक माली 'चूँ-चूँ-चूँ-चूँ' करके चरसा (मोट) चला रहा था। घर के आस-पास झंखाड़ों की बाढ़ लगी थी। मुन्नू बाँस की टट्टी खोल कर अन्दर चला गया। अन्दर विस्तृत आँगन था, आँगन में खाटों पर बच्चे सो रहे थे। स्त्रियाँ घर में झाड़ू दे रही थीं। खल-ल-ल करता पानी बह रहा था और नालियों में होकर खेतों में जा रहा था। ठण्डी-ठण्डी वायु हरे खेतों को नचा रही थी।

घर की राह

मुन्नू अत्यन्त थक गया था। जहाँ चरसा चल रहा था, वह वहाँ चला गया, और नाली में बहता पानी पी, एक पत्थर पर बैठ इधर-उधर देखने लगा।

खपरैलों पर छाई हुई तोरई की बेलें हिल रही थीं, नाली में बहता हुआ पानी सामने की क्यारी में जा रहा था। बैल धीरे-धीरे ऊपर चढ़ने लगे। मुन्नू आँखें फाड़-फाड़कर यह देख रहा था। वह बैठा रहा। इतने कष्ट के बाद कुछ शान्ति मिली। मन्द-मन्द बहते मलयानिल से उसे झपकियाँ आने लगीं। अपने दोनों पैरों को उसने पानी में डुबा लिया। वह डरा, कहीं काला-काला नंगे शरीर का किसान कुपित न हो जाय। पैर ऊपर उठा लिये; पर किसान कुछ न बोला, फिर से उसने पैर डुबा लिये।

पवन के झोंके से, सूख रही धोती नीचे गिर पड़ी। मुन्नू दौड़ा, धोती उठाकर माली को दे दी। धोती लेकर माली फिर चरसा चलाने लगा।

'ननकू, ऐ ननकू! जरा पानी तो फेर दे।'—किसान बोला।

'अच्छा काका!'—कह उसने दूसरे खेत में पानी फेर दिया।

मुन्नू बैठा-बैठा झपकियाँ लेता रहा। भूख सताने लगी; पर चारा क्या था। थोड़े समय पश्चात् किसान ने बैलों को छोड़ कर भूसा डाल दिया। धूप अब खपरैलों पर हो, कुएँ और खेतों पर पड़ने लगी।

'लो, रोटी खालो।'—कहती हुई एक बुढ़िया टोकनी (डलिया) में रोटियाँ और पालक का शाक ले आई। चबूतरे पर बैठ, माली और

ननकू हाथ में रोटी ले खाने लगे। मुन्नू सामने ही पत्थर पर बैठा-बैठा उनका मुँह ताकता रहा; न हिला न डोला, और न साहस हुआ माँगने का। एक बार इच्छा हुई कि माँगे; पर खयाल हुआ—कहीं न दी तो? कहीं गालियाँ देने लगे तो? कहीं मार कर भगा दें तो? तो ऐसे सुख से बैठे रहने का अवसर भी जाता रहेगा, जो उसे मुश्किल से मिला है। मुँह में पानी आने लगा। पर, माँगने का साहस न हुआ।

'ले-ले-ले! तू-तू-तू!'—माली ने कुत्ते को पुकार कर रोटी का टुकड़ा फेंका।

कितना सुन्दर? कितना मीठा होगा वह? वह उसे उठा के खा जाय? नहीं, वह ऐसा न करेगा। आलस दूर करता हुआ वह बैठ गया। ननकू मुन्नू के भावों को ताड़ रहा था।

'ऐ लड़के! रोटी खायगा?'—उसने पूछा। मुन्नू फिर खड़ा हो गया।

'हाँ, भैया!'—

ननकू ने दो मोटी रोटियाँ और पालक का शाक मुन्नू को दिया। कितनी सुन्दर रोटियाँ थीं! और पालक का शाक? मुँह में पानी आ गया। एक हाथ में दोनों रोटियों को ले, दूसरे से तोड़-तोड़ मुन्नू बड़े चाव से खाने लगा। कितना प्यारा भोजन था! अहा! एक-एक टुकड़े को चबाता, मन-ही-मन प्रसन्न होता, वह दोनों रोटियाँ उड़ा गया। अगर कुछ और मिल जायँ, तो वह दो-तीन रोटियाँ और भी खा जाय।

'और लेगा ?'—माली घर में चला गया। उसके जाते ही ननकू ने पूछा।

'हाँ भैया!'

ननकू ने एक रोटी और थोड़ा-सा शाक और दे दिया। मुन्नू उसे भी खा गया। अब माँगना ठीक नहीं। हाथ धो, पानी पी, वह फिर पत्थर पर बैठ गया।

'ईश्वर तुम्हारा भला करे!'—मेरे लायक कोई काम हो तो बताओ।'

'काम करेगा ?'—माली निकट आता हुआ बोला—अच्छा जाओ, ननकू और तुम खेतों को पानी पिलाओ, मैं चरसा चलाता हूँ।

माली चरसा चलाने लगा। मुन्नू और ननकू पानी फेरने लगे। थोड़ी देर में दोनों में मित्रता हो गई। दोपहरी भर दोनों बातें करते रहे। खेतों को पानी पिलाते रहे।

'यहीं रह जाओ अब।'—ननकू ने फावड़े को एक ओर फेंकते हुए कहा।

'तुम रख लोगे, तो रह जाऊँगा भैया! मेरे और कौन है ?'

'तो काम करना पड़ेगा!'

'जो हो सकेगा, वह अवश्य करूँगा।'

कड़ी धूप पड़ने लगी। जमीन से आग की लपटें निकलने लगीं। गरम-गरम लू चलने लगी। काम करना असंभव होगया और दोपहरी में रोटी खाने का समय भी आगया; इसलिए माली ने चरसा छोड़ दिया, और बैलों को खेत में नीम के नीचे

बाँध, चारा डाल दिया। दोनों मित्र नाली में हाथ-पैर धो बातें करते घर की ओर चल दिये।

बैंगन के खेत में से दो-तीन सुन्दर बैंगन तोड़कर एक मुन्नू को देता और एक बैंगन खुद खाता हुआ ननकू बोला—लो यह खाओगे ?

'तुमही खाओ भाई, कच्चे बैंगन से पेट में दर्द होगा।'

'अरे वाह ! पेट मे दर्द होगा ?'—मुँह बनाते ननकू ने कहा।

दोनों घर में घुस गये। गोबर से लिपी हुई धरती स्वच्छ दिखाई देती थी। दोनों बैठ गये। बुढ़िया ने खाना रख दिया। मुन्नू अलग बैठ गया। माली एक कोने में बैठा चिलम फूँकने लगा।

'यह लोटा तो माँज ले'—माली ने मुन्नू से कहा।

मुन्नू लोटा माँजने चला गया। मुन्नू कितना मूर्ख था, उसने यह भी न सोचा कि एक अछूत का लड़का इस प्रकार एक हिन्दू के घर में नहीं जा सकता—किसी का नहीं छू सकता। पर, वह निरुपाय था। डॉक्टर साहब के घर में रहकर वह इस बात को भूल ही गया था कि वह अछूत है। अछूतपन क्या होता है, एक अछूत की क्या दशा होती है, एक अछूत किसी का धरम भिरस्ट करके उन पर कितनी आपत्तियाँ डालता है, और डाल सकता है ?—वह इन बातों को उसी दिन जान सका था, जिस दिन वह माताजी के कटु वचनों से, डॉक्टर साहब के घर से, रानी जीजी के पास से, इतनी दूर भाग आया था। जीजी की याद आते ही मुन्नू का हृदय भर आया। लोटा माँज वह भीतर गया।

घर की राह

'क्यों रे ! तू कौन जात है ?'—भीतर आते ही माली ने प्रश्न किया।

क्या जवाब दे ?—मुन्नू सोचने लगा। वह कह दे—भंगी है। फिर क्या इस घर में वह रह सकेगा ? वह चुप रहा।

'अरे बोलता नहीं ?'

'मैं...मैं...अछूत हूँ।'

'अछूत क्या ? कौन जात है ?'

'भं...भंगी...'

'अरे तेरे पाजी की ! निकल यहाँ से ! मेरा धरम भिरस्ट कर दिया तूने, उठ भाग यहाँ से !'—माली क्रोध से बोल उठा।

'हाय भगवान् ! इसने भिरस्ट कर दिया—भगाओ इसे यहाँ से !'—बुढ़िया बोल उठी।

मुन्नू बाहर निकल आया और धूप में खड़ा रह गया।

'भाग यहाँ से ! छू लिया हमें, और फिर भी खड़ा है ! भाग नहीं तो जूते खायगा अब !'

ननकू रोटी खाना छोड़, मुन्नू को देखता रहा। मुन्नू की आँखों से आँसू बहने लगे। उसने क्यों कहा कि भंगी है ? नहीं कहता, तो क्यों उसे यहाँ से चला जाना पड़ता ? वह मूर्ख है। क्रोध में उसने अपने गालों पर दो चपतें जमा लीं।

वहाँ से निकल मुन्नू धूल से ढके हुए उसी रास्ते पर खड़ा-हो गया, जो उसे प्रातःकाल यहाँ ले आया था, अपने घर से, जहाँ उसकी जीजी रानी थी और मित्र शैल बाबू। जमीन तवे

जैसी तप रही थी—उसके पैर जले जाते थे ; पर आन्तरिक जलन बाहर की जलन से कहीं अधिक थी। धूप की परवाह किये बिना, वह रोता-रोता रास्ते पर चलने लगा।

अहा ! वह कैसे अच्छे दिन थे, जब माताजी उससे प्रसन्न रहा करती थीं। एक दिन चाँदनी रात में उन्होंने माताजी के पैर दबाये थे, तब उन्होंने एक-एक पैसा सब को दिया था। फिर तीनों ने पारबती को कितना चिढ़ाया था ! उस दिन जब वह फ़ेल हुआ था, तब भी माताजी ने उसे पुचकारा था और माताजी के दिये पैसों से उन्होंने गाजरें खाई थीं।

तो सहसा यह परिवर्तन माताजी में किस प्रकार हुआ ? हाँ, उस रात को वह बड़ पर न चढ़ा होता, तो आज उसकी यह दशा क्यों होती ? वह फिर घर लौट जाय ? नहीं, वहाँ जाना असंभव है। वहाँ रहना अशक्य है। वह चलता ही रहा। कितनी कड़ी धूप पड़ रही थी ! रास्ते में कोई वृक्ष भी नहीं, जहाँ विश्राम ले। गरम-गरम धूल उड़-उड़कर उसकी आँखों में भरी जाती थीं। भूख भी लगने लगी थी।

'हे भगवान् ! तूने मुझे क्यों अछूत बनाया ? मुझे मार क्यों न डाला ?'—ऊपर सूर्य की ओर अपने दोनों हाथों को ऊँचा करता हुआ वह बोल उठा।

दाहिनी ओर कुछ दूरी पर श्मशान में आग की लपटें उठ रही थीं। मुन्नू रास्ता छोड़ उधर चला गया। देखा, एक शव चिता पर जल रहा है। पास कोई मनुष्य दिखाई नहीं देता।

पास एक इमली का वृक्ष खड़ा है। एक उल्लू उस पर बैठा उसे देख चीत्कार करने लगा। कौन जल रहा होगा? और कोई मनुष्य पास क्यों नहीं है? होगा कोई उसी जैसा अनाथ, जिसे गाँव के लोग चिता पर रखकर चले गये होंगे।

न जाने कैसी भावनाएँ मुन्नू के हृदय में उठने लगीं। उसका हृदय फटने लगा। वह दो कदम पीछे हट गया, फिर आगे बढ़ा, वह भी इसी चिता में जल के भस्म हो जाय तो? उसके हई कौन? वह कहाँ मारा-मारा फिरा करेगा? सबसे अच्छा उपाय यही है। उसके सब दुःखों का अन्त यहीं हो जायगा। वह आगे बढ़ा। ज्वालाएँ उसे छूने लगीं। वह जलने लगा। सहसा पीछे हट गया। आह, मरना भी तो इतना सहल नहीं!

सामने इमली के नीचे राख का ढेर लगा था। हाथ ऊँचे करके वह जोर से रोने लगा। उस राख के ढेर में लोटता वह पछाड़ें खाने लगा। यह जीवन भी क्या है? अब वह क्या करे, कहाँ जायँ, उसके अब कौन है? पर मरना इतना सहल नहीं। तो फिर वह क्या करे?

जब शोक का वेग कम हुआ, और जब अश्रु-प्रवाह भी मंद पड़ा, तब मुन्नू ने आस-पास देखा—वह राख के ढेर में पड़ा है। सारा शरीर राख में सन गया है। चिता-ज्वाला भी कम हो चली है; आकाश में सूर्य एक छोटे से काले बादल के टुकड़े से ढँक गया है। वह उठ बैठा और श्मशान को छोड़ फिर रास्ते पर चलने लगा।

थोड़ी देर में एक पक्का रास्ता दिखाई दिया, जो इस कच्चे रास्ते से मिल जाता था। उसी पर चलने लगा। एक बड़ा सा गाँव आया। सामने टीन की चद्दरों से छाया मकान दिखाई दिया। लोहे के बड़े-बड़े खंभे भी दीखे। जरा देर में स्टेशन भी आ गया

आह! कैसे अनजान विश्व में वह पग बढ़ा रहा है? वह स्टेशन के भीतर चला गया। 'फक-फक-फक' करती गाड़ी आ गई। मुसाफिर लोग चढ़ने और उतरने लगे। 'पान! पूरी-मिठाई! दही-बड़े! कचालू!' की अनोखी आवाजें उसके कानों पर पड़ीं। वह घबरा उठा। अब क्या करे? गार्ड ने सीटी दी। दो-तीन मुसाफिर गाड़ी का दरवाजा खोल डिब्बे में घुसने लगे। मुन्नू भी उन्हीं के पीछे घुस गया। और 'फक-फक-फक' करती गाड़ी स्टेशन और उतरे मुसाफिरों को छोड़, मुन्नू को लेकर चल दी। मुन्नू सीट के नीचे बैठ गया। वह कुछ समझ न सका, क्या हो रहा है, उसने यह क्या किया, वह कहाँ जा रहा है?

११

दिन-भर माताजी रोती रहीं। न कुछ खाया, न पिया। रानी ने भी कुछ न खाया। शैल की तबीयत आज बहुत अच्छी थी।

डॉक्टर साहब दिन भर क्रोध में रहे, और वह क्रोध नौकरों और मरीजों पर उतारा गया। कल्लू भी उस दिन खूब रोया। अपने डर को दूर कर आज वह भी भीतर चला आया। देखा, माताजी रो रही हैं। चुपचाप खड़ा हो गया। रानी तरकारी काट रही थी।

'बैठ जा कल्लू।'—वह बोली।

'जीजी! अम्माँ त्यों लोती हैं?'

'योंहीं।'

'मत लोवो अम्माँ'—माताजी के पास जाता, डरता-डरता वह बोला। माताजी ने आँचल से अपने आँसू पोंछे।

घर की राह

'कल्लू, आ बेटा !'—कह माताजी ने उसे अपनी दरी पर बिठा लिया।

'रानी !'—वे बोलीं।

'अम्माँ !'

'जा बेटा ! एक तश्तरी में ज़रा मिठाई तो ले आ।'

'लाई अम्माँ !'

'खाआ बेटा !'—माताजी ने कल्लू के पास तश्तरी सरकाते हुए कहा।

'यैल भैया नहीं थाँयदें ?'

'अरे शैल ! तुम भी इधर आओ। रानी, दूसरी तश्तरी तो ला बेटा !'

दोनों मित्र एक ही दरी पर बैठ, एक दूसरे को अपनी-अपनी मिठाई दिखाते हुए खाने लगे।

'कल्लू ! ये उँगली तो पकड़'—माताजी ने अपनी दो उँगलियाँ कल्लू के पास ले जाते हुए कहा। कल्लू ने उँगली पकड़ी।

'वाह बेटा वाह ! तेरा मुन्नू आज शाम को आजाएगा।'—माताजी प्रसन्नता से बोलीं।

'सच अम्माँ ?'—शैल ने पूछा।

'तो उथ मैं दो आम थिलाऊँदा।'

'और मैं यह मिठाई खिलाउँगा'—शैल अपनी तश्तरी से एक रसगुल्ला अलग रखते हुए बोला।

'कल्लू, मुन्नू कहाँ होगा ?'—माताजी ने फिर से प्रश्न किया।

'अमाँजी ! आभ ती दाली पर बैथा होदा—दूर दंदल में ।'

'आज आयेगा न ?'

'हाँ अम्माँ ! दरूर आयदा ।'

सारे गाँव में यह बात फैल गई कि मुन्नू भाग गया है । अनेक तर्क-वितर्क होते रहे । कोई कहता—वह घर के दुःख से भागा है, तो कोई कहता—वह चोरी करके भागा है ।

'हाँ जी ! वह भंगी था, अपनी जात का असर थोड़े ही जायगा !'—मूलचन्द हलवाई ने पूरी बेलते हुए कहा ।

'हाँ जी, छोटी जात के लोग ऐसे ही होते हैं !'—सौदा लेते हुए एक देवताजी ने जवाब दिया ।

'सुना है, घर में से सोने के कड़े चुराकर भागा है !'

बात यहाँ तक पहुँची कि गाँव के दो-चार ब्राह्मण देवता नाज़िम साहब के पास दौड़े हुए गये और उसके पीछे सिपाही छुड़वा उसे गिरफ्तार कराने की सलाह दी ।

शाम को डॉक्टर साहब बाहर मैदान में बरगद के नीचे आराम कुरसी पर बैठे हुए थे । सामने की कुरसी पर नाज़िम साहब हाथ में 'वन्देमातरम्' अखबार ले, पढ़ रहे थे । आस-पास बेंचें और चारपाइयाँ पड़ी हुई थीं । चारों ओर पानी छिड़क कर तरी की गई थी । सामने सड़क पर लड़के गुल्ली-डंडा खेल रहे थे ।

'क्यों डॉक्टर साहब, कुछ पता चला कि नहीं ?'

'अभी तक तो कुछ पता नहीं चला ।'

'सिपाही आगये ?'

'वे भी अभी नहीं आये।'

'कुछ चुराकर तो नहीं भागा ?'

'वाह ! यह आपने खूब कहा। वह बच्चा ऐसा न था जनाब !'

'देखिए, वह अफरीका वाले गांधी भी आजकल अछूतों के मामले में बड़ा सिर मार रहे हैं। अखबार कहता है, वे इस आन्दोलन को अपने हाथ में लेंगे।'

'ठीक है, ऐसा होना ही चाहिए।'

सड़क पर दो सिपाही, आपस में बातें करते आ रहे थे।

'बड़े मियाँ, अब क्या जवाब देंगे ?'—पहला सिपाही दाढ़ी वाले सिपाही से बोला।

'बड़ा भोंदू है तू भी !'

'तुम तो उस भंगिन की तिरछी नजरियों से बेहोश होगये हो ! तुम्हें कुछ ख़याल है ?'

'चल बे भोंदू ! देख तो, कैसी गोली मारता हूँ।'

दूर से ही ज़मीन तक झुक कर दोनों ने सलाम किया।

'आदाबअर्ज, ग़रीब परवर !'

'क्यों बड़े मियाँ, क्या हुआ ? ऐसे उदास क्यों हो ?'—डॉक्टर साहब ने दोनों से प्रश्न किया।

'हुजूर, क्या बताएँ ! यहाँ से अलस्सुबह ही दौड़े-दौड़े गये। सारे जंगल को ढूँढ डाला। हर एक कुएँ-बावड़ी में तलाश किया, उनमें बिलाइयाँ तक डलवाईं ; पर कुछ पता न चला हुजूर !'—बड़े मियाँ अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बोले।

'हाँ हुजूर ! रामखेड़ी, माल्हू, पारू, ढोलम, देवली—सब-के-सब गाँव छान डाले। खेत, जंगल सब देख डाले, और चमारों को भी सब जगह तलाश करने को भेजा ; पर कुछ पता न चला !'

'हुजूर, मेरे...मेरे ख़याल से...'—बड़े मियाँ हाथ जोड़ते हुए कुछ कहने का प्रयत्न करने लगे।

'हाँ, हाँ, कहिए।'—नाज़िम साहब ने कहा।

'मेरे ख़याल से तो उसे कोई उठा के ले गया ! उसका पता अब नहीं लग सकता।'

'हुजूर ! मेरे ख़याल से उसे भेड़िया उठा ले गया होगा ! अब पता लगना मुश्किल है।'

'अच्छा जाओ ! तुम लोगों से कुछ न होगा।'

'हुजूर, इतना तलाश करने पर भी न मिले, तो हम गरीबों का क्या कसूर ?'

'अच्छा जाओ, मैं खुद जाऊँगा !'—डॉक्टर साहब ने कहा।

उस रात को माताजी ने ख़ूब पश्चात्ताप किया, ख़ूब रोई ; पर रोने से क्या होता है ? डॉक्टर साहब ने खूब समझाया। माताजी ने प्रण किया कि जब तक मुन्नू घर पर न लौटेगा, वे आम न खायँगी।

डॉक्टर साहब 'टमटम' में बैठ, दूसरे दिन मुन्नू की तलाश में गये ; पर कुछ पता न चला।

१२

'टिकिट लाओ !—टिकिट लाओ !'—कहता हुआ टिकिट बाबू मुन्नूवाले डिब्बे में दाखिल हुआ। मुसाफिर लोग अपने-अपने टिकिट दिखाने लगे। कोई वास्कट में से निकालता, कोई कोट में से। कोई सेठजी अपने तीसरे कुरते की जेब में से निकाल कर हाथ जोड़ते हुए दिखलाते, कोई बाबू साहब सीट पर सोते-सोते ही 'यह लीजिए' कह कर दूर से टिकिट दिखा, फिर सोने लग जाते।

मुन्नू सीट के नीचे ही बैठा झपकियाँ ले रहा था। सारी रात उसने इसी प्रकार बिताई थी। बगल की सीट पर एक मोटे सेठजी मैनचेस्टर मिल की महीन धोती पहने, सोने के बटन लगाये, मलमल का कुरता पहने हुए, अपनी तोंद फुलाये, सारी सीट पर कब्जा किये बैठे थे। रात भर आप उसी पर लेटे रहे। सामने की सीट पर सेठानीजी घूँघट निकाले सोती रहीं। कोई मुसाफिर

आकर उस सीट पर बैठने की धृष्टता करता, तो कहा जाता कि सेठानीजी बीमार हैं। क्षय का रोग है। बेचारी तीन दिन से सोई नहीं हैं। गरीब मजदूर लोग तो कहना मान जाते, और सीट के नीचे ही बैठ जाते, या दूसरे डिब्बे में चले जाते ; पर जब कोई बाबू साहब आते, तो सेठजी खड़े हो जाते, और हाथ जोड़ उन्हें अपनी सीट पर बिठा लेते और इतने मार्मिक शब्दों में सेठानीजी की रुग्णावस्था का वर्णन करते कि आगन्तुक के मुँह से सहसा सहानुभूति के दो शब्द निकल पड़ते।

डिब्बे की तीसरी सीट पर दो युवक निकर और खाक़ी शर्ट पहने, सिगरेट फूँकते रात भर न जाने क्या गिटपिट-गिटपिट करते रहे। मुन्नू उन्हें देखता रहा, और उनकी भाषा समझने का प्रयत्न भी करता रहा ; पर कुछ समझ में न आया।

टिकिट बाबू को देख, दोनों युवक आँखें मिचकाते उसी सीट पर सो गये।

'टिकिट लाओ !'—टिकिट बाबू अपनी इवनिंग हेट को ठीक करते हुए बोले।

कोई जवाब न मिला।

'ऐ, टिकिट लाओ !'

फिर भी जवाब न मिला। टिकिट बाबू झुँझला पड़ा। एक युवक का पैर पकड़ उसे जगाने लगा।

'सुनता नहीं ! टिकिट दिखाओ।'

'कौन है यू उल्लू ! ब्लडी फूल ! रॉस्कल ! नींद में डिस्टर्ब

करता है !'—पहला युवक एक दम उठ बैठा, और बिना आँखें खोले ही टिकिट बाबू को एक चपत जमा दी। भाग्य-वश चपत उनके गालों के बदले, हेट पर पड़ी, जो उड़ती हुई सेठजी की तोंद को आलिंगन करती, सेठानाजी के घूँघट को स्पर्श करती, उनका मुँह देखती हुई सीट से नीचे गिर पड़ी।

'ऐं, यह क्या बदतमीज़ी है जी ! तुम इन्सल्ट करते हो ?'

सहसा दूसरा युवक जाग पड़ा। दोनों खड़े हो टिकिट बाबू की ओर आँखें तरेर कर, घूर-घूर कर देखने लगे।

'कैसा नामाकूल है तुम ! हमको डिस्टर्ब करता है ?'

टिकिट बाबू डर गया।

'तु...तुम को टि...टि...किट दि...दिखाना पड़ेगा। तु...तुम क्या स...स...समझते हो ?'

'तो सीधी तरह से क्यों नहीं बातें करते ! खलल डालते हो हमारी नींद में ?'

दोनों युवक अपने टिकिटों की तलाश करने लगे। कभी शर्ट के जेबों में देखते, कभी निकर की दोनों जेबों में हाथ डालते ; पर टिकिट न मिला। बाबू साहब खड़े-खड़े देखते रहे। माँगने का साहस न हुआ। दूसरे मुसाफिरों के टिकिट देखने लगे। दोनों ने भीतरी जेब से अपनी रिवाल्वर्स निकालीं। उन्हें खोल कारतूस निकाल कर देखने लगे।

'अरे ससुरे कहाँ चले गये ! मिलते ही नहीं।'

कारतूस और रिवाल्वर्स को देख, बाबू साहब का मुँह सूख

गया। 'र...रहने दी...जिए।'—कहते आप मुन्नू वाली सीट के पास आगये।

'ये लो शाब, ये लो!'—कहते सेठजी हँसते हुए नीचे से हेट उठा, टिकिट बाबू को देने लगे।

'ह ह ह! लाइए सेठजी, लाइए। सेठानीजी के लगी तो नहीं?'—सेठजी के पास बैठते, बड़ा दयार्द्र मुँह बना सेठानीजी के घूँघट की ओर दृष्टिपात करते बाबू साहब बोले। घूँघट में से एक आँख हँस रही थी। बाबू साहब शरमा गये।

'अजी वा शाब! ऐसी तो शेठाँ के लाग्याँ ही करे है।'—सेठ जी लाल थैली में से पान बनाने की सामग्री निकाल पान बनाते हुए बोले।

'बेचारे सो रहे थे। मुझे खयाल न रहा।'—बाबू साहब ने सिर पर टोपी रखते हुए कहा।

'हाँ शाब! इनका क्या किशूर, बिचारे शो रहे थे।'

'जी हाँ, नहीं तो वे चिढ़ते ही क्यों? आखिर हैं तो हमारे ही भाई!'—लेटे हुए युवकों की ओर देखते हुए बाबू साहब बोले—युवक सो रहे थे, या सो रहने का ढोंग कर रहे थे, ईश्वर जाने।

मुन्नू डरता-डरता टिकिट बाबू की ओर देखने लगा।

'लीजिए बाबूजी!'—कहते हुए हँसते-हँसते सेठजी ने पान दिया। बाबू साहब ने पान मुँह में रख लिया।

'बाबू शाब, देखिये ये टिकट...पर बाबू शाब! अपनी

पास सामान जरा ज्यादा है।'—सेठजी हाथ जोड़ते हुए बोले।

'कोई बात नहीं सेठजी, चिन्ता न कीजिए, हम सब भाई ही तो हैं; आपकी इतनी सेवा भी न की, तो फिर क्या किया। 'अरे छोकड़े! तेरा टिकिट कहाँ है?'—टिकिट बाबू दोनों युवकों को सोता देख जरा जोर से बोले।

मुन्नू काँपने लगा। कुछ न बोला।

'अबे पाजी कहीं के, टिकिट कहाँ है?'—सिर पर हेट रखते, पान चबाते, अपने रोब को फिर जमाने का प्रयत्न करते हुए, बाबू साहब बोले।

'सा...साहब, नहीं है।'

'नहीं है! तो फिर बैठा काहे को?'

मुन्नू कुछ न बोला।

'अरे, बोलता नहीं, क्यों बैठा?'

मुन्नू रोने लगा।

'तो क्या, रोकर हमें डराना चाहता है? बोल, क्या है तेरे पास?'—बाबू साहब फिर युवकों की सीट की ओर देखते हुए बोले।

'सा...ब...कुछ भी नहीं है।'

'सच बोल, खड़ा हो!'

मुन्नू खड़ा हो गया। काँपता-काँपता, रोता-रोता।

'देखिए, क्या स्वाँग रचा है?'—सेठजी की ओर हँसते हुए बाबू साहब ने कहा।

'जब पीशा पास नहीं है, तो बैठोई क्यूँ है सुसरो ? सरकार ने रेलगाड़ी इनके वास्ते बणाई है कांई ?'—सेठजी बोले ।

'वाह ! यह काँपने की विद्या कहाँ से सीखी बे तूने ? बड़ा उस्ताद है !'

मुन्नू और ज़ोर से रोने लगा ।

'बडा रोणे वाला आया है, देक्ख्या बाबूजी !'—सेठजी सुपारी काटते हुए बोले ।

बाबू साहब ने मुन्नू की तलाशी लेना शुरू किया । उसका कुरता, धोती, अण्टी वगैरह सब कुछ देख डाला ; पर कुछ न मिला ।

'साले बदमाश कहीं के, एक पैसा भी तो पास नहीं रखते

'कुण जात है रे तू ?'—सेठजी ने पूछा ।

मुन्नू न बोला ।

'अरे बोलता नहीं, गधे कहीं के !'

'माली ।'

'माँ-बाप कहाँ हैं ?'

'नहीं हैं ।'

'अजी होगा शाला, कोई चोर बोर । आप तो पुलिश के हवाले कर देणा'—सेठजी बाबू साहब के कन्धे पर हाथ रखकर समझाते हुए बोले ।

'अजी थे क्यूँ लपर-लपर करो हो ! थाँका दाजी को काँई बगाड्यो ईने, जो छोरा ने तंग करो हो ?'—सेठानीजी घूँघट में से बोल उठीं । इन शब्दों का ऐसा असर हुआ कि सेठजी चुप हो गये ।

'उतर जाना अगले स्टेशन पर, नहीं पिटेगा साले !'—मुँह में पेंसिल ठूँसते, कुछ गुनगुनाते हुए बाबू साहब ने कहा।

सेठजी कुछ न बोले। पहला युवक जाग पड़ा।

'अरे श्यामू, कब तक सोता रहेगा?'—पहला युवक बोला।

'सिर क्यों खाता है ! चपत खानी है क्या, उस ससुरे टिकट बाबू की तरह।'

टिकिट बाबू तुरत सेठजी की बेंच पर बैठ गये। मुन्नू हाथ जोड़ता बाबूजी के पैरों पर गिर पड़ा।

'साहब ! आपके हाथ जोड़ता हूँ, मुझे मार डालिए; पर पुलीस के हवाले मत कीजिए।'

'अच्छा, अच्छा, चुप रह !'—अपने बूट से संकेत करते हुए बाबू साहब ने कहा।

खटखट करती गाड़ी पटरियाँ बदलने लगी। सामने की खिड़की में से डूबते हुए रवि की सुनहली किरणें सेठानीजी के घूँघट पर पड़ने लगीं। गाड़ी इधर-उधर डोलती हुई एक पटरी से दूसरी पटरी पर जाने लगी। कटे हुए डिब्बों, शहर में जलती बिजली की बत्तियों, शहर के घरों की छतों तार के खम्भों, धर्मशालाओं, रेल की लाइनों, साफ़ रास्ते पर चलती मोटरों, साइकलों और टाँगों पर मुन्नू की नजर पड़ी। कितना विशाल जगत् है, और कितना अद्भुत !—मुन्नू सोचने लगा। वह कहाँ जायगा ? किसके पास जायगा ? कहाँ रहेगा ? कहाँ खायेगा-पियेगा ? कहाँ सोयेगा। उसके हृदय में न जाने कैसी कैसी भावनाएँ उठने लगीं। गाड़ी का

वेग अत्यन्त मन्द हो गया और देखते-देखते गाड़ी ठहर भी गई।

'चलो उतरो !'—टिकिट बाबू मुन्नू का हाथ खींचता हुआ बोला।

'बाबू सा !...'—मुन्नू गिड़गिड़ाता हुआ बोला।

'अबे चलता है कि नहीं !'—टिकिट बाबू ने डाँट बताई।

वह उसे लेकर नीचे उतर गया। प्लेटफार्म पर मनुष्यों की भीड़ लगी हुई थी। कोई उतरता था, कोई चढ़ता था। खोमचे-वाले इधर-उधर दौड़ रहे थे। कोई 'कुली ! ऐ कुली !' पुकारता था। कोई हाथ में सुराही ले दौड़ता हुआ नल के पास जा रहा था। कोई कुली से और कोई 'चाय गरम' वाले से झगड़ रहा था।

'चाय गरम ! —गरम चाय !' 'पान, बीड़ी, सिगरेट, माचिस !' 'गोश्त, रोटी, क़बाब !' 'नागपुरी संतरा !—नागपुरी संतरा !' की आवाज़ों से स्टेशन का वातावरण गूँज रहा था।

मुन्नू धक्के खाता स्टेशन के फाटक के पास जा पहुँचा। बिजली की बत्तियाँ जल रही थीं। वेटिङ्गरूम के पास दो-चार अंग्रेज खड़े सिगरेट पी रहे थे। मुसाफिर अपना-अपना टिकिट दिखलाकर बाहर निकल रहे थे। मुन्नू को यहीं रोक लिया गया। कुली धक्का दे-देकर रास्ता कर रहे थे। पागल की तरह वह यह सब दृश्य देखता रहा। उसका सिर चकराने लगा।

थोड़ी देर में टन-टन-टन करके जोर से घंटा बजा, मुसाफिर लोग अपने-अपने डिब्बे में घुस गये। गार्ड ने सीटी दी, और 'फक-

फक-फक' करती गाड़ी उसे छोड़ कर चल दी। प्लेटफार्म पर फिर से शांति छा गई। कितना अन्तर था उस कोलाहल में, हलचल में; और इस शांति में ?

सामने, दूसरे प्लेटफार्म पर, दूसरी गाड़ी के कटे डिब्बे पड़े थे। बिजली की बत्तियों का प्रकाश टिन शेड के नीचे बैठे हुए मुसाफिरों पर, आस-पास पड़े असबाब, और चिवड़ा और फ्रूट की गाड़ी पर पड़ रहा था।

'चलो।'—एक टिकिट कलेक्टर ने कहा।

मुन्नू चल दिया। दूसरे फाटक पर कुछ बाबू लोग थे।

'बता क्या है तेरे पास ?'—एक गोरे-से कंजी आँख वाले बाबू ने पूछा।

'कुछ नहीं बाबूजी !'

'बड़ा बाबूजी वाला आया है !'

'इसकी तलाशी लो !'—दूसरा बाबू बोला।

तलाशी ली गई; पर कुछ न मिला।

'अच्छा जाने दो।'—दूसरा बाबू कंजी आँख वाले से बोला।

'साले न जाने कहाँ से आ जाते हैं !'—बड़ा बाबू मुन्नू के सिर पर टिकिट चेक करने का प्लास मारता हुआ बोला।

मुन्नू वहीं पर बैठ गया; और सिर पकड़ कर रोने लगा।

'क्यों रोता है, भाग जा यहाँ से !'—कंजी आँख वाला बाबू बोल उठा। मुन्नू के सिर में से खून बह रहा था। उसकी सफेद टोपी लाल होगई। जिस जगह पर, बरगद के ऊपर से

गिरने पर चोट लगी थी, उसी पर फिर चोट लगी। मुन्नू को वह दिन याद आ गया। सच है, उसी ने शैल को पटका था और उसके इतनी चोट आई थी। उसे भी तो अब लगना चाहिए, उसका बदला मिलना चाहिए।

'ऐ, टिंचर आईडीन लगवादो इसके सिर पर!'—बड़ा बाबू बोला।

कंजी आँख वाला उसे ले गया और सिर में टिंचर लगवा दिया।

टिंचर आईडीन के लगते ही सिर में जलन होने लगी। मुन्नू फर्श पर पछाड़ें खाने लगा। बाबू लोग धीरे-धीरे अपने-अपने काम पर चले गये। किसी को क्या परवाह किसी मुन्नू और चुन्नू की।

जब वेदना कम हुई, तो मुन्नू उठा और स्टेशन के बाहर आया। रात पड़ चुकी थी। बिजली की रोशनी, स्टेशन के सामने विशाल मैदान और अलकतरे की पक्की सड़क, मुसाफिरों की प्रतीक्षा करते हुए दो-चार इक्के-ताँगे—यही सब कुछ मुन्नू को दिख रहा था। सामने की दूकानों में बिजली की छोटी-छोटी बत्तियाँ जल रही थीं। होटलों में से हारमोनियम के स्वर सुनाई दे रहे थे। दो-चार कुली इधर-उधर टहल रहे थे। वह बाहर चल दिया। सड़क पर खड़ा हो गया। पास की गटर में से दुर्गन्ध आ रही थी। उसने चारों ओर दृष्टि डाली। ओह! कैसा अनजान देश था? उसके गाँव से कितना बड़ा और कितना अद्भुत! उसका

यहाँ कोई नहीं। वह अब कहाँ जायगा ? किस प्रकार जीवन व्यतीत करेगा ? विचार आते ही मुन्नू का गला भर आया। सिर में वेदना हो रही थी। कुरता फाड़कर सिर पर पट्टी बाँध ली। कहाँ जाय ? शैल बाबू क्या कर रहे होंगे ? और जीजी ? जीजी आँगन में खाट पर लेटी होंगी, पारबती से बातें कर रही होंगी। और माताजी ? आज उसे माताजी भी याद आने लगीं। वे पहले उससे कितना प्रेम करती थीं ? हाँ, वे भी सो रही होंगी। बाबूजी अखबार पढ़ रहे होंगे। वह वहाँ होता, तो रानी जीजी से बातें करता होता, या अपनी खाट पर आँगन में सो रहा होता।

'एक तरफ! ऐ, एक तरफ!'—कहता एक टाँगा वहाँ से निकल गया। मुन्नू जैसे तन्द्रा से जागा। उसे फिर से अपनी वास्तविक स्थिति का खयाल आया ; पर अब क्या ? अब तो जैसे ईश्वर उसे रक्खेगा, वैसे ही रहना होगा।

जीजी की भोली प्रतिमा उसकी आँखों के सामने नाचने लगी, मानों वह श्वेत खादी की साड़ी पहने शिवजी की पूजा कर रही हो। गटर के पास एक गोल पत्थर देखा, उसे उठा लिया। ऐसे ही शिव की पूजा तो रानी जीजी करती थीं। वह गटर के पास ही बैठ गया और शिवलिंगाकार पत्थर को रख पूजा करने लगा।

भूख सताने लगी। वह उठ बैठा। सामने फुटपाथ था। उसी पर चलने लगा। होटलों में बैठे मनुष्यों को पूरी, कचौरी, सेव पकौड़ी, खाते और चाय पीते देख उसके मुँह में पानी आ गया; पर माँगने की हिम्मत न हुई। आगे चल दिया। एक होटल के सामने

वह खड़ा हो गया। होटल के बाहर दो-चार कुरसियाँ पड़ी हुई थीं। दो-चार ग्राहक बैठे सिगार पी रहे थे। एक ११-१२ वर्ष की लड़की, होटल के पास खड़ी भीख माँग रही थी।

'बाबूजी, एक पैसा !'

'चल यहाँ से !'—होटल के मालिक ने कहा।

'भूखी हूँ बाबूजी, ईश्वर भला करे !'

'अरे जाती है कि नहीं !'

'ऐ, इधर आ !'—बाहर कुरसी पर सिगार फूँकते हुए, फेल्ट केप वाले एक युवक ने उसे पुकारा। वह वहाँ चली गई।

'अच्छा, जरा नाच तो !'—फेल्ट केप वाला युवक, दूसरे की ओर आँख का कुटिल संकेत करता हुआ बोला।

'एक पैसा दो बाबूजी !'—हाथ जोड़ती हुई वह बोली।

'ऐ परी ! जरा नाचो तब देंगे।'

वह बारह वर्ष की बच्ची नाचने लगी। मैले-कुचैले उलझे हुए बालों को इधर-उधर कन्धे पर झुलाती हुई हाथों से अभिनय करती हुई, वह नाचने लगी।

'वाह ! वाह !'—दूसरा युवक एक पैसा फेंकता हुआ बोला।

'वाह ! क्या कहना है !'—पहले युवक ने कहा।

'ऐ लड़की, इधर आ।'—एक दूसरे युवक ने उसे अपने पास बुलाते हुए कहा। वह उसके पास चली गई। उसने लड़की का हाथ पकड़ उसकी ओर आँखों का कुटिल संकेत करते हुए उसके हाथ में इकन्नी थमा दी।

घर की राह

'यह कोहकाफ़ की परी है जनाब !'—हँसते-हँसते पहले युवक ने कुटिल कटाक्ष किया।

आँखों से कृतज्ञता प्रकट करती, हँसती हुई वह भिखारिन बालिका वहाँ से चलदी। मुन्नू खड़ा-खड़ा यह दृश्य देखता रहा। उसने निश्चय किया, वह कभी भीख न माँगेगा। ऐसी दुत्कार, ऐसी फटकार, ऐसी कुटिल हँसी वह न सह सकेगा। वह चल दिया। इक्के, ताँगे और मोटरों का आना-जाना अब बन्द हो गया था। होटलों के सिवा सब दुकानें बन्द हो गई थीं। सामने की धर्मशाला में—खाटों पर दो-एक मनुष्य लेटे हुए थे। फुटपाथ पर, फेंके हुए सड़े-गले केले और सेव के टुकड़े बिखरे हुए थे। विचार हुआ— खाले। नहीं, ऐसी गंदी वस्तु वह न खायगा, कदापि नहीं ; पर भूख लगी थी। दो दिन से कुछ खाया नहीं था। वह फुटपाथ पर बैठ गया। उन वस्तुओं को देखता रहा। फिर विचार किया— खा जाय ? क्या हर्ज है ? नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। वह कुछ और आगे बढ़ा। केले को हाथ में लेकर देखने लगा। अच्छा तो है ! फेंक दे ? क्यों, खाने में क्या हर्ज है ? अच्छा तो है ! स्वच्छ तो दिखाई देता है। नहीं, खराब है। उसने उसे फेक दिया। सेव के दो-चार टुकड़े उठाये। हाँ, यह अच्छे हैं। तो चखकर देखूँ ? क्या हर्ज ? उसने मुँह में रख लिये। वाह, बड़ा अच्छा स्वाद है ! वह उठा-उठा कर खाने लगा। सब साफ़ कर गया।

ऐं ! यह मैंने क्या किया ? आत्म-ग्लानि से वह रोमांचित हो

उठा। ओह! ऐसी गंदी चीजें वह खा गया? वह कैसा गधा, मूर्ख, पाजी है!

वह आगे बढ़ा। सामने घोड़े पर सवार एक विशाल मूर्ति देखी। किसकी है यह? पास ही, बाग में जाने का एक विशाल फाटक था। सामने एक चौक-सा बना हुआ था। वह फुटपाथ पर बैठ गया। नींद आने लगी। वहीं पर लेट गया।

'ऐ, वहाँ मत सोना!'—पीछे से एक अपरिचित आवाज़ आई। उसने उस ओर देखा। वही भिखारी लड़की आ रही थी। मैले उभले हुए बाल, उसके मुख और कन्धे पर लटक रहे थे। शरीर पर मनों मैल था। एक फटा-सा मोटा कुरता पहने थी। घँघरी में १०-१५ छिद्र दिखाई देते थे। दोनों हाथों से कुरते को झोली बनाए हुए वह मुन्नू के पास आकर बैठ गई, और झोली की चीजें मुन्नू को दिखाने लगी।

'तुमने आवाज दी थी?'—मुन्नू ने पूछा।

'हाँ।'

'क्यों?'

'क्योंकि सरकारी हुक्म है कि कोई इस फुटपाथ पर न सोये।'

'तुम्हें कैसे मालूम?'

'मुझे मालूम है, मैं जानती हूँ।'

'इतनी छोटी लड़की में इतना ज्ञान?'—मुन्नू सोचने लगा।

'अच्छा यह खाओ'—अपने कुरते की झोली में से केले और सेव मुन्नू को देती हुई वह बोली।

'मुझे भूख नहीं है।'

'नहीं, खाओ।'

'अच्छा खाऊँगा : पर अपना नाम तो बताओ। तुम मुझे जानती नहीं, और मुझसे बातें कैसे करने लगीं ?'

'न जाने क्यों, तुम्हारा चेहरा देख तुमसे बातें करने को जी हो आया। जैसे तुम अकेले हो, तुम्हारे कोई नहीं है, यहाँ से तुम अनजान हो। मैंने तुम्हें कभी नहीं देखा। मेरा नाम मुन्नी है।'

'सच ?'

'सच। और तुम्हारा नाम ?'

'मुन्नू !'

'ओहो ! तो......तो तुम मुन्नू और मैं मुन्नी ! क्यों ?'—वह ताली बजाती, हँसती हुई बोली।

मुन्नू इस हास्य का तात्पर्य न समझ सका।

'तुम क्यों हँसती हो ? मुझे तो रोना आता है।'

'मैं भी खूब रोई हूँ : लेकिन अब कभी नहीं रोती। अब तो हँसा ही करती हूँ।'

'अच्छा ! तुम तो ऐसी बातें करती हो, जैसे बड़े आदमी करते हैं। रानी जीजी भी तो ऐसी बातें नहीं करतीं।'

'ह ह ह ! हाँ, मैं भी तो अब बड़ी हो गई हूँ। रानी जीजी कौन हैं ?'

'कोई नहीं, फिर बताऊँगा।'

'अच्छा खाओ।'

दोनों खाते रहे। दोनों में मित्रता-सी हो गई।

'तुम इस तरह रहती हो, तुम्हारे कोई नहीं है ?'

'क्यों नहीं है, सारा शहर जो मेरा है।'

'यह ठीक है ; पर रहने का घर ?'

'घर वर कुछ भी नहीं।'

'सच ? तो फिर तुम्हारे कोई भी नहीं है ?'

'नहीं।'—गंभीर बनते हुए उसने कहा।

उसकी हँसी न जाने कहाँ जाती रही। वह चुप हो गई। मुन्नू भी फुटपाथ पर बैठा, चुपचाप बाग के फाटक को, मूर्ति को, सामने बन्द की हुई दूकानों को, और पुल को देखता रहा। मुन्नी रोने लगी।

'क्या हुआ मुन्नी, क्यों रोती हो ? अभी तो तुम हँस रही थीं।'

'कुछ नहीं। चलो......'

'कहाँ ?'

'सोने।'

'यहाँ नहीं सोओगी ?'

'नहीं, पहले ही न कह दिया, यह सोने की जगह नहीं है।'

'यहाँ सोने में क्या हर्ज है ?'

'वह काला-काला सिपाही आकर सताएगा तब ?'

'अच्छा ! तुम्हें कैसे मालूम ?'

'मैं तो आज कई साल से यह सब देख रही हूँ।'

'अच्छा चलो।'

घर की राह

दोनों खड़े हुए। फाटक में हो, बाग के भीतर आ गये। शेर दहाड़ा। मुन्नू डर गया। तीन-चार रास्ते दिखाई दिये। एक, दूर पर खड़े बड़े-से मकान की ओर जाता था। दूसरा, आम्र-कुंज की ओर। तीसरा, नई बनाई क्यारियों की ओर। एक ओर आम के वृक्षों की कतार लगी थी। उसी के सामने मेंहदी की कतारें थीं। बाईं ओर घास का लान था। पास ही नल था। दोनों ने हाथ धो पानी पिया।

'चलो।'—मुन्नी बोली।

'कहाँ?'

'उस तरफ एक मढ़ई है, वहीं सोएँगे।'

'इसी बेंच पर क्यों न सो जायँ?

'नहीं कोई देख लेगा!'

'देखने दो, मैं तो यहीं सोऊँगा।

'पुलिस का सिपाही मारेगा तब?'

पुलिस का नाम सुनते ही मुन्नू काँपने लगा।

'अच्छा, तो चलो।'

दोनों बाईं ओर के रास्ते पर चलने लगे, जहाँ आम के वृक्षों की कतार थी। आगे बढ़े। आमों के वृक्ष घने होने लगे। दाहिनी ओर एक मढ़ई-सी दिखाई दी। आस पास आमों के वृक्ष खड़े थे। दोनों मढ़ई में चले गये। मढ़ई में नीचे हरी-हरी दूब उगी थी। पास ही एक बेंच पड़ी थी, लताओं में एक फटी-सी गुदड़ी लटक रही थी। मुन्नी ने उसे निकाल घास पर बिछा लिया, और उस पर बैठ गई।

'आओ, बैठ जाओ !'

मुन्नू उसी के पास बैठ गया।

'तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ? क्या करते हो ?'—मुन्नी ने अनेक प्रश्न कर डाले।

'यह सब मत पूछो मुन्नी।'

'नहीं, बताओ।'

'मैं भंगी हूँ।'

'तुम्हें सब छूते हैं ?'

'मैं किसी से नहीं कहता कि मैं भंगी हूँ।'

'तब क्या कहते हो ?'

'यही कि माली हूँ।'

'मैं कौन हूँ, जानते हो ?'

'नहीं।'

'चमारिन।'

'तो तुम्हें सब छूते हैं ?'

'नहीं, मैं अपने को बिरामनी बताती हूँ।'

'कब से यहाँ रहती हो ?'

'तीन साल हो गये। अच्छा, अब सो जाओ।'

'तुम्हारी दशा...'

'बस, अब सो जाओ।'

वह लेट गई, उस गुदड़ी पर, जिससे पसीने की दुर्गन्ध आ रही थी।

'आओ, मेरे पास ही सो जाओ ।'—वह बोली ।

'नहीं, मैं बेंच पर सोऊँगा ।'

'जाओ, वहीं सोओ, मुझे क्या !'

'नाराज मत होओ मुन्नी, अब तुम मुझे अपने साथ ही रक्खोगी न ?'

'हाँ ।'

'तुम आज इस तरह भीख क्यों माँग रही थीं ?'

'पेट भरने को ।'

'नहीं, तुम्हें इस प्रकार न नाचना चाहिए । मेरी जीजी होतीं, तो तुम्हें खूब डाँटतीं ।'

'कौन जीजी ?—न माँगू तो पेट कैसे भरे ?'

'लेकिन पेट भरने के लिए ऐसा नहीं किया जाता । हाँ, मेरी जीजी बड़ी अच्छी हैं । वे रोज महादेव की पूजा करती हैं।'—मुन्नू रानी जीजी को याद करता हुआ बोला ।

'अच्छा, मुझे भी पूजा सिखाना ।'

'अच्छा ।'

मुन्नू बेंच पर लेट गया । मढ़ई में अँधेरा था । सर्वत्र शान्ति थी । मुन्नी वहीं पर लेटी रही । वह कुछ न बोली । फिर शेर दहाड़ा । सारी लतावेष्ठित मढ़ई काँप उठी । मुन्नू भी काँपने लगा ।

'मुझे ड...डर...लगता है ।'

'तो आओ, यहाँ आ जाओ ।'

'आऊँ ?'

'हाँ, मैंने तो पहले ही कहा था।'

मुन्नू चला गया। गुदड़ी पर बैठ गया। मुन्नी के सिर पर हाथ रख उसका मुँह ताकता हुआ वह बोला—मुन्नी! तुम बड़ी अच्छी हो। हम अब साथ ही रहेंगे।

'हाँ।'—कह मुन्नी ने उसे अपने पास लेटा लिया। मुन्नू संकोच छोड़ उसी के पास लेट गया। प्रेमवश मुन्नू के गले में हाथ डाल वह रोने लगी।

'क्या हुआ मुन्नी?'

'कुछ नहीं। सो जाओ।'

फिर सिंह ने गर्जना की। दोनों डर कर एक दूसरे से लिपट गये। थोड़ी देर में उन्हें नींद भी आ गई।

१३

नये ढंग के बने हुए बँगले के बाहर की वाटिका में कुरसी पर बैठे फादर मूर पत्र लिख रहे थे। वाटिका के नीम के वृत्त के ऊपर से गिरजाघर का शिखर दिखाई दे रहा था। सामने मेज पर पत्र, इंकस्टैण्ड, पोर्ट फोलियो वगैरह लिखने का सामान रक्खा हुआ था। टेबल के नीचे बड़े-बड़े बालवाला सफेद कुत्ता बैठा-बैठा जीभ लपलपा रहा था। आसपास की क्यारियों में चमेली, बेला और कई प्रकार के गुलाब के फूल खिले हुए थे। एक क्यारी में गुलदावदी के सुन्दर फूल खिल रहे थे। प्रातःकाल का ठंडा पवन, पुष्पों की सुगन्ध बँगले के भीतर तक ले जा रहा था। एक लिफाफा खोल कर फादर पत्र पढ़ने लगे।—

गिल्ड हॉल,
न्यूयार्क, अमेरिका
ता०.........

'माई डीयर फादर मूर,

आपका पत्र मिला। इस साल की रिपोर्ट अच्छी नहीं है।

सन् १८९९ में जितने हिन्दुस्तानी लोगों ने हमारा धर्म स्वीकार किया, उतना अब नहीं कर रहे हैं—इसका क्या कारण है ?

यदि लीग की आर्थिक स्थिति ठीक न हो, तो रुपया यहाँ से मँगा लीजिए। धन के द्वारा ही धर्म का प्रोपेगेण्डा होता है। आप धन के लिए फिक्र न कीजिए। आप ही के हाथ में वहाँ की व्यवस्था है ; इसलिए आपको उचित है कि हर प्रकार के उपायों को काम में लाएँ।

धन की परवाह न करें ; जितना चाहें खर्च कर सकते हैं। अमेरिका के धनी लोग हिन्दुस्तान के लिए सोने और चाँदी की नदियाँ बहा देंगे—इसी के द्वारा हमारे धर्म का प्रचार वहाँ हो सकता है। हमारा यही ध्येय है कि समस्त विश्व हमारे झंडे के नीचे—हमारे धर्म की पताका के नीचे—आ जाय। संसार का उसी दिन कल्याण होगा, जिस दिन वह हमारा धर्म स्वीकार कर लेगा। शेप कुशल। उत्तर शीघ्र।

तुम्हारा,

विशप धूर।'

पत्र पढ़कर फादर मूर ने उसे टेबल पर रख दिया। अपने दोनों हाथों से चश्मे को ठीक कर, वे तीक्ष्ण दृष्टि से चर्च की ओर देखने लगे।

'फादर क्राइस्ट !' वे खड़े होकर बोलने लगे—'शक्ति दो, मुझ में शक्ति दो ! वह समय कब आयगा, जब तुम्हारी क्रूसीफाइड

मूर्ति के सामने समस्त संसार अपना शीश नवाएगा।'—इतना कह वह बैठ गये।

'जार्ज!'—फादर मूर ने आवाज़ दी।

'जी!'—कहता हुआ एक बालक दौड़ता आया।

'जाओ, चाय यहीं ले आओ।'

निकर और हाफ-शर्ट पहने हुए एक बालक एक ट्रे में चाय और बिस्किट लाकर टेबल पर रख गया। चाय पीकर फादर ने कलम उठा पत्र लिखना शुरू किया। सफ़ेद चोंगा पहने, गले में क्रॉस डाले, लम्बी सफेद डाढ़ी और खुले सिर वाले फादर पत्र लिखने में तल्लीन होगये।

क्राइस्टपुर गार्डन।

ता०......

'डीयर विशप धूर,

आपका पत्र मिला। यहाँ पर सब काम ठीक हो रहा है। यह सच है कि सन् १८९९ में जितने हिन्दू लोग क्रिश्चियन बने, उतने अब नहीं बनते। इसके अनेक कारण हैं। सन् १८९९ में यहाँ भयंकर अकाल पड़ा। पानी न बरसने के कारण मनुष्य मरने लगे। उस समय हमारी लीग ने सराहनीय कार्य किया—गरीब लोगों को धन तथा अन्न से सहायता पहुँचाई। फल यह हुआ कि जिन्हें यह मदद दी गई, उन्हें ईसाई बना लिया गया।

१८९९ के बाद भारतवर्ष की आर्थिक दशा अच्छी न होते हुए भी ऐसा अकाल कोई न पड़ा, कि जिससे हिन्दू लोग अपने

पेट के वास्ते अपने धर्म को छोड़ने को तैयार हों। यहाँ की नीच जातियाँ निर्धन होते हुए भी असंतोषी नहीं हैं, इससे बहुत कम लोग अपना धर्म छोड़ना चाहते हैं।

मुसलमान क़ौम में अधिकांश अशिक्षित तथा निर्धन हैं; किन्तु वे धर्म के पक्के हैं। वे कभी अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहते।

किन्तु हिन्दुओं में एक जाति है, जिस पर हमारा प्रभाव अधिक पड़ता है। वह जाति है, अछूत या भंगी। इन्हें हिन्दू लोग नहीं छूते, इन्हें मन्दिरों में प्रवेश करने का अधिकार भी नहीं है। न ये हिन्दुओं के कुएँ से पानी भर सकते हैं। न ये किसी पब्लिक इन्स्टिट्यूशन में आ सकते हैं। न ये स्कूल में ही पढ़ सकते हैं। १८९९ के बाद जितने भी हिन्दू हमारी लीग के द्वारा कनवर्ट (नव ईसाई) किये गये हैं, उनमें से ७५ फी सदी भंगी-चमार ही हैं, जो अछूत समझे जाते हैं।

आर्य-समाज के आन्दोलन से हमारे कार्य में बहुत ही बाधाएँ पड़ी हैं; पर उनका कार्य अब कुछ शिथिल-सा दिखाई देता है।

अभी तक तो कार्य अच्छी तरह से चलता रहा है; पर डर है, जब महात्मा गांधी इस कार्य को—अछूतोद्धार के कार्य को—अपने हाथ में लेंगे, तब हमारे कार्य में अवश्य रुकावट पहुँचेगी। फिर भी सनातनी लोग धर्म के इतने कट्टर हैं, कि वे किसी की न सुनेंगे। उनके लिए तो चाहे सब अछूत विधर्मी हो जायँ, तो भी वे अपने 'धर्म' को नहीं छोड़ना चाहते। हमारे लिए ऐसे सना-

तन धर्म की जय हो। रिफ़ार्मर्स—गांधी के पक्ष वाले—अपना कार्य इतना जल्दी नहीं कर सकेंगे, जितना वे करना चाहते हैं।

एक और भी बात हमारे लिए खुशी की है कि गवर्नमेन्ट के द्वारा कोई ऐसा पूअर लॉ नहीं बनाया गया है, जिससे निर्धन-अनाथों को सहायता पहुँचाई जा सके। हट्टे-कट्टे साधु-ब्राह्मण तो भीख माँग उदर पूर्ण कर सकते हैं; पर वास्तविक निर्धन, असहाय, और अपंग मनुष्य नहीं। ऐसे असहायों को हम सहायता पहुँचाते हैं और अपने धर्म में मिला लेते हैं।

लॉर्ड से प्रार्थना है, कि कार्य करने की शक्ति दें। शेष कुशल।

आपका,

फादर मूर।'

पत्र बंद कर फादर गार्डन में टहलते-टहलते बाइबिल पढ़ने लगे, पश्चात् गिरजाघर को चल दिये।

१४

प्रातःकाल जब मुन्नू जगा, तब उसने देखा कि वह अकेला ही गुदड़ी पर पड़ा है। वह इधर-उधर उस लड़की को देखने लगा; पर वह कहीं पर न दिखाई दी।

इस समय मुन्नू के सिर में दर्द अधिक होने लगा। रात को मुन्नी के साथ वार्त्तालाप करने में उसका दर्द न जाने कहाँ चला गया था।

दिन अधिक चढ़ गया था। सोचा—मुन्नी भीख माँगने चली गई होगी। मढ़ई के छिद्रों में से छन-छनकर सूर्य की किरणें, हरी दूब और उसकी गुदड़ी पर पड़ रही थीं। बेंच पर कोई न था। घास पर चींटियाँ दौड़ लगा रही थीं। मुन्नू ने गुदड़ी उठा, एक कोने में छिपा कर रख दी। वह मढ़ई के बाहर चला आया। स्वच्छ रास्ता था। दूरी पर एक अच्छा-सा मकान खड़ा था। थोड़ी दूर कटघरे में शुतुरमुर्ग़, हिरन, सिंह वगैरह जानवर थे।

वह बाग के सदर रास्ते पर चलने लगा। एक ओर आम के

वृक्षों की कतार थी, दूसरी ओर मेंहदी की। एक आम के नीचे दो-चार केरियाँ पड़ीं थीं, उसने उठा कर खा लीं।

आगे चला। ठंड लगने लगी। सिर भी जोर से दुखने लगा। बाग के बाहर निकलने वाले फाटक के पास के नल से पानी पी वह बाहर आ गया। वहीं घोड़े पर सवार मूर्ति मुन्नू की ओर देखती खड़ी थी। मूर्ति के ऊपर आकाश से सूर्य देव अपना प्रकाश डाल रहे थे। सहसा उसे मुन्नी की याद आ गई; पर कोई उपाय न था। वह फिर उस लड़की की खोज में चल दिया।

फुटपाथ पर चलता हुआ, वह स्टेशन की तरफ चला गया; पर वह न दिखाई दी। फिर वापिस लौट आया। मढ़ई में जरा देर तक बैठा। वहाँ भी वह न मिली। फिर बाग के बाहर आ, पुल की ओर चल दिया। मनुष्यों का आना-जाना कभी से शुरू हो गया था। गाड़ियाँ चल रही थीं। पों-पों करती मोटरें इधर से आतीं और उधर चली जातीं। वह आगे चला। सामने के घंटाघर में टन-टन-टन नौ बजे। सामने एक सुन्दर बड़ा-सा मकान दिखाई दिया। आगे की ओर दोनों तरफ दूकानें थीं। रास्ते पर केले और नारंगी के छिलके पड़े थे। पास की गटरों में से दुर्गन्ध निकल रही थी। गलियों में मनों कचरा पड़ा था। कहीं पानी के ढुलने से कीचड़-सा मचा हुआ था। आगे भाजी बाजार दिखाई दिया। मनुष्यों की भीड़ लगी हुई थी। रास्ते पर हाथ में अखबार लिये हुए, छोटे लड़के चलते-चलते बोलते जाते थे—'सरदार का सत्याग्रह!'—'बम का धड़ाका!' कोई खड़ा-खड़ा

समाचार-पत्र पढ़ता था, तो कोई दूकान पर खड़ा दूध पी रहा था। उसका गाँव कितना छोटा है—कितना शान्त! और यह शहर कितना बड़ा, गन्दा और अशान्त!

उसका शरीर गरम तवे की भाँति जलने लगा। हाथ-पैर टूटने लगे। चलने की सामर्थ्य जाती रही। वह कुछ भी विचार न कर सका। कितना अनजान देश है, और यहाँ उसका कोई नहीं। ऐसी अवस्था में वह कहाँ जाय? चलना असम्भव हो गया। एक सकड़ी-सी गली दिखाई दी। उसी में घुस पड़ा। यहाँ सूर्य का प्रकाश भी न पड़ता था। अँधेरा-सा छा रहा था। जमीन तर थी। पास ही गटर बह रही थी। केले और नारंगी के छिलके और कूड़े का ढेर पड़ा था। मुन्नू वहीं पर गिर पड़ा। सिर के दर्द और ज्वर के कारण कराहने लगा।

ओह! कैसी दशा उसकी हो रही है, और होगी? अब उसे कौन सँभालेगा? क्या वह यहीं पर इसी प्रकार पड़ा रहेगा? इस अनजान देश में उसकी इसी प्रकार दुर्दशा होगी? वह भिखारी की लड़की भी उसे छोड़कर चली गई। वह होती, तो उसे कुछ मदद देती। कल रात को दोनों कैसे लिपट कर सोये थे? कितना आनन्द आया था। ओह! वह कितना अभागा है।

'जब वह अपने गाँव में बीमार हुआ था, लोहे की खाट पर पड़ा था, तब रानी जीजी ने उसकी कितनी सेवा-सुश्रूषा की थी? आज वे यहाँ होतीं तो?'—मुन्नू अधिक न सोच सका। नेत्रों से जल निकल-निकल बहने लगा।

१५

क्राइस्टपुर के अस्पताल के मेल वार्ड में, एक सुन्दर लोहे की खाट पर मुन्नू लेटा हुआ था।

'क्यों, अब कैसे हो ?'—नर्स ने भीतर आते हुए प्रश्न किया।

'अच्छा हूँ, पर मैं कहाँ हूँ ?'—क्षीण स्वर में उसने पूछा।

'अच्छा, यह दूध पी जाओ।'

युवती नर्स ने फीडिंग कप से दूध पिलाया।

'लेकिन मैं...?'

'अच्छा अब सो जाओ।'

'लेकिन मैं......?'

'फिर कहूँगी, अभी सो जाओ, तुम बड़े अच्छे लड़के हो।'

मुन्नू ने पीछे खिड़की में देखने का प्रयत्न किया ; पर नर्स ने उसे सुला दिया।

घर की राह

क्राइस्ट सेवा-लीग के स्वयं-सेवक मुन्नू को उस गली में से ले आये थे। मुन्नू आज एक महीने से इस अस्पताल में बीमार पड़ा है। अब उसकी तबीयत अच्छी होती जा रही है।

रात के समय नर्स फिर आई। मुन्नू खाट पर लेटा-लेटा विचार-ग्रस्त था। यहाँ कैसे आया? कौन उसे ले आया? यह कौन-सा नगर है? यह स्त्री इतनी दयालु क्यों है? पहले दिन जब उसे आस-पास का ज्ञान हुआ, उसने सोचा—यह रानी जीजी ही होंगी; और यह अस्पताल उसके गाँव का होगा। उस दिन उसे कितना आनन्द आया था! सारे दिन उसने नेत्र मूँदे ही यह आनन्द लूटा था। नेत्र न खोले थे, इस डर से कि कहीं यह आनन्दमय दृश्य नष्ट न हो जाय।

पर दूसरे दिन जब उसे अधिक होश आया, और उसने अपने नेत्र खोले, तब उसे कितना दुःख हुआ था? उसके गाँव की, अस्पताल का मरीज़ों का कमरा इतना विशाल न था। उसकी खाट कितनी सुन्दर है, और कपड़े भी कितने स्वच्छ! फिर भी जब उस विशाल कमरे में उसने एक साथ दस लोहे की खाटों पर पड़े रोगियों को देखा, तो उसका हृदय विह्वल हो उठा। आह! यह उसका गाँव नहीं है। उसके रोगी-हृदय में न-जाने कैसे अद्भुत् भाव उठने लगे।

उस दिन जब नर्स उसे दूध पिलाने आई, उसने नर्स की ओर घूर-घूर कर देखा। नहीं, नहीं, यह जीजी नहीं है। वह खूब रोया; और दूध पिये बिना ही खाट पर लेट गया। नर्स के अत्यन्त आग्रह करने पर भी उसने दूध न पिया।

दूसरे दिन से उसका टेंपरेचर बढ़ता गया। नर्स डर गई ; और बड़े ध्यान से सुश्रूषा करने लगी। नर्स उसे बातचीत करने का समय न देती। मुन्नू इन्हीं विचारों में गुँथा हुआ था।

'क्यों, क्या कर रहे हो ?'—नर्स ने उसकी खाट पर झुकते हुए पूछा।

'कुछ नहीं। तुम कौन हो ?'

'मैं नर्स हूँ।'

'नर्स, नर्स क्या ?'

'तुम्हारी सेवा करने वाली।'

'मेरी बहन ?'

'हाँ।'

'रानी जीजी ?'

'हाँ।'

'मैं यहाँ......'

'देखो, यह दूध पीलो और सो जाओ।'

'पर तुम मुझे जवाब क्यों नहीं देतीं ?'—नर्स का हाथ पकड़ते हुए मुन्नू रोता-रोता बोला।

'नहीं, रोओ मत। तुम तो बड़े अच्छे लड़के हो ?'

'तुम मुझसे छिपाती क्यों हो ?'

'नहीं, छिपाती नहीं। तुम्हारी तबीयत जरा ठीक हो जाय, तो फिर सब बताऊँगी।'

'अच्छा।'—मुन्नू हताश हो खाट पर लेट गया।

घर की राह

'अच्छा, अब सो जाओ।'—उसके सिर पर हाथ फेरती हुई नर्स बोली, और फिर वह चली गई।

बड़ी रात तक खाट पर लेटा-लेटा मुन्नू अनेक तर्क-वितर्क करता रहा। नर्स इतनी दयालु होते हुए भी क्यों उससे बातें छिपाने का प्रयत्न करती है? क्या वह इसी प्रकार एक अनजान स्थान में कैदी की भाँति पड़ा रहेगा? सामने की दीवाल के ह्वाइट वाश पर पेन्सिल से एक चित्र-सा खिंचा हुआ दिखाई दिया। मुन्नू उसी को देखता रहा। किसका चित्र होगा—ऊँट का, हाथी का, पशु का या पक्षी का? वह चित्र अनेक प्रकार के भावों को उसके हृदय में उठाने लगा। मन व्याकुल होने लगा। जोर से अपने बिस्तर पर हाथ पटक वह रोता-रोता सो गया।

मुन्नू की तबीयत ठीक होने लग गई है। आज वह बिलकुल अच्छा है। सिर से पट्टी भी उतार दी गई है। नर्स ने उसे नहलाया है, और स्वच्छ कपड़े पहनाये हैं—ख़ाकी निकर और वी कॉलर की शर्ट। अस्पताल की सुन्दर वाटिका में एक कुरसी पर वह बैठा है।

'क्यों, आज क्या खाओगे?'—नर्स ने वाटिका में प्रवेश करते हुए पूछा।

'कितना कोमल स्वर है! अठारह वर्ष की अवस्था होगी। सफेद फ्रॉक के नीचे मोज़े पहन रक्खे हैं। उसके बाल कितने सुन्दर हैं?'—मुन्नू सोचने लगा।

'जो आप देंगी'—मुसकराते हुए मुन्नू ने कहा।

'अच्छा तुम्हें ब्रेड बटर (रोटी-मक्खन) देंगे। अंडा अच्छा लगता है ?'

'उहुँक, मैंने कभी नहीं खाया।'

'अच्छा, तो अब खाना।'

'उहुँक, मैं नहीं खाऊँगा। मुझे अच्छा नहीं लगेगा।'

'अच्छा देखा जायगा।'—नर्स एक कुरसी पर बैठ गई।

'मैं यहाँ कैसे आया ?'—मुन्नू ने पूछा।

'तुम्हें इससे क्या मतलब ?'

'मुझे जानना चाहिए।'

'देखो, यह क्राइस्टपुर है। हमारे स्वयंसेवक तुम्हें यहाँ ले आये हैं। तुम पढ़ने जाओगे न ?'

'हाँ, पर मुझे वे यहाँ क्यों ले आये ?'

'क्योंकि तुम बुखार में बेहोश थे, मर जाते !'

'मर जाता ! पर उन्हें इससे क्या ?'

'लॉर्ड क्राइस्ट का आदेश है—दीन दुखियों की सेवा करना।'

'तो मुझे ले आने वाले देवता हैं ?'

'हाँ, देखो, वह देवता आ रहे हैं।'—नर्स ने फाटक की तरफ उँगली से दिखाते हुए कहा। मुन्नू ने देखा—सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरता, सफेद चोंगा पहने, बाटिका के फाटक को खोल एक व्यक्ति आ रहा है। मुन्नू को अब भी सब अनजान-सा दिखाई देता था। नये ढंग का अस्पताल, नये ढंग की बाटिका और नये ढंग की पोशाक ! वह सचमुच कोई नये ही संसार में

पदारोपण कर रहा है, जहाँ सुख है, शान्ति है और दया है। क्या यह स्वप्न है ?

फादर के पास आते ही नर्स खड़ी हो गई।

'गुड इवनिंग फादर डीयर !'—नर्स ने खड़े होकर हाथ मिलाया।

'गुड इवनिंग डीयर।'

'खड़े हो जाओ।'—नर्स ने मुन्नू की ओर देखते हुए कहा।

मुन्नू खड़ा हो गया।

'देखो, ये फादर हैं, इन्हें गुड इवनिंग करो।'

मुन्नू फादर को देखता रहा।

'कहो, गुड इवनिंग फादर।'

'गुड इवानी फाडर'—मुन्नू बोला।

दोनों हँसने लगे।

'बैठ जाओ, टुम बैठ जाओ'—हँसते-हँसते पास की आराम कुरसी पर बैठते हुए फादर बोले। फादर के दुबले श्वेत शरीर और वस्त्र से एक अनुपम तेज टपक रहा था। सफेद दाढ़ी और चश्मा फादर के मुख की कांति को बढ़ा रहे थे।

'टुमारा नाम ?'—फादर ने पूछा।

'मुन्नू।'

'हलो, नर्सी डीयर ! बिफार बेप्टीज़्म, इसका नाम ज्योर्जी रक्खो। डेखो, मुन्नू ब्वॉय ! टुमारा नाम अब ज्योर्जी ! अच्छा लगटा है ?'

मुन्नू चुपचाप खड़ा रहा।

'बैठ जाओ इढर।'—फादर ने कुरसी पर बैठने को संकेत किया।

मुन्नू कुरसी पर बैठ गया। सायंकाल का मारुत नर्स के रेशम-जैसे बालों से खेलता, बाटिका के पौदों को हिलाता, सामने के बाटिका में खड़े नीम और अंजीर के वृक्षों को हिलाता चला जाता था।

'डेखो! अब टुम अच्छा हो गया है। टुमको बोर्डिङ्ग में रक्खा जायगा। टुम पढ़ने जायगा?'

मुन्नू कुछ न बोला।

'टुमको पढ़ना अच्छा लगता है?'

'जी।'

'अच्छा! टुमको पढ़ायगा। बौट अच्छी बाट है।'—नर्स की ओर झुकते हुए फादर बोले—ज्योर्जी को बोर्डिङ्ग हाउस में रक्खो। उसका आधा डज़न शर्ट और निकर डिलवाओ।'

'आलराइट फादर!'—नर्स ने प्रत्युत्तर दिया। 'ज्योर्जी, खड़ा हो ब्वॉय। यस, नाइस!'

मुन्नू खड़ा हो गया।

'माई ब्वॉय! लार्ड ने टुमको हमारे पास भेजा है। टुमको सच्चा आडमी बनायगा।'

मुन्नू इसका कुछ आशय न समझ सका। फादर उठे, 'गुड-नाइट' कहते, दोनों से हाथ मिलाते फाटक खोल चर्च की ओर चल दिये।

थोड़े समय के बाद नर्स भी उठी, और उसे पीछे-पीछे चलने का संकेत किया। वह कहाँ जा रहा है ? इस अद्भुत देश में, अनोखे वातावरण में वह क्यों आया ? फादर इतने दयालु क्यों हैं। उसके प्रति इस प्रकार सहानुभूति और दया दिखाने का क्या कारण ? क्या वह इन लोगों के बन्धन में फँस जायगा ? कभी इस अनजान स्थान के बाहर न जा सकेगा ? उसको आदमी बनाया जायगा, तो क्या वह अब तक हैवान था, मूर्ख था, मनुष्य न था ? चर्च, क्राइस्ट, ये सब कौन हैं ?—अनेक प्रकार के विचार उसके हृदय में उठने लगे। सिनेमा की फिल्म की तरह उसके भूतपूर्व चित्र उसकी आँखों के सामने नाचने लगे।

आगे नर्स थी, पीछे वह चल रहा था। बाहर मैदान में नि-कर और शर्ट, फ्राक और शू पहने बालक-बालिकाएँ एक बड़ी-सी गेंद से खेल रहे थे। मैदान के दोनों सिरों पर बाँस के दो दो खंभे गड़े हुए थे। कई बालिकाओं के बाल बालकों की तरह कटे हुए थे। पश्चिम समुद्र में डूबते रवि की सुनहरी किरणें, मैदान में खेलते बालकवृन्द पर, आस-पास खड़े मकानों पर, नीम, पीपल और दूसरे अपरिचित वृक्षों पर पड़ रही थीं। इस जगह के वृक्ष भी नये थे।

आगे चलने लगे। रास्ते के बाईं ओर बड़ा गिरजाघर खड़ा था, उसी के पास विस्तृत ; पर शान्त और भयानक कब्र-स्तान (ग्रेव यार्ड) था। कितनी शांति थी वहाँ ? चर्च की मीनारें सूर्य की अन्तिम किरणों को चुम्बन करती हुई खड़ी थीं—कितनी

सुन्दर ! ग्रेव यार्ड में खड़े वृक्षों की गहरी नीलिमा नीचे के गम्भीर शान्त और श्याम सरोवर में प्रतिविम्बित हो रही थी। चर्च के बाहर के फाटक में से मुन्नू ने यह सब देख लिया। चर्च और ग्रेव यार्ड के चारों ओर की दीवार पर अनेक लताएँ झूल रही थीं। रास्ते पर खड़े नीम के वृक्ष पवन में झोंके खा रहे थे।

और आगे चले। कुछ दूरी पर एक ही प्रकार के मकानों की कतार थी—एक विशाल कंपाउण्ड के अन्दर। कंपाउण्ड के मध्य में कुछ ऊँचाई पर एक बड़ी-सी बिल्डिंग के आस-पास बाग लगा था। बाहर ही से देखा, यहाँ भी बालक-बालिकाएँ एक साथ खेल रही हैं। यह भी कोई नया खेल है। एक लड़का दौड़ता-दौड़ता एक छोटी सी गेंद फेंकता है; सामने खड़ा लड़का एक बल्ले से मार कर भागता है। सामने, दूर पहाड़ों पर सूर्य अस्त हो रहा है। कितना सुन्दर दृश्य है! फिर भी उसके हृदय में इतनी वेदना क्यों ?

सहसा मुन्नू की दृष्टि नर्स पर पड़ी। अहा ! वह कितनी दयालु, कितनी शान्त और गम्भीर है! रानी जीजी भी तो ऐसी ही हैं। पर, वे तो ऐसी पोशाक नहीं पहनतीं। एक दम उसके हृदय में शोक और ग्लानि के भाव उठने लगे। वह कैसा अभागा है ? अपने देश और वेश को छोड़कर, वह एक अनजान देश में आ गया है। इस स्थान के मनुष्य प्रेमी हैं, दयालु हैं; पर इनमें कुछ स्वार्थ अवश्य होगा। नहीं, नहीं, वह कितना भी निर्धन हो, असहाय हो, वह अपने ही भाइयों के संग

रहेगा। नेत्रों में जल भर आया। कुछ न बोला। नर्स के पीछे-पीछे चलता रहा।

नर्स फाटक के भीतर घुसी। विद्यार्थीगण खेल रहे थे। यह क्राइस्टपुर का स्कूल है, जहाँ अनाथ बालक-बालिकाओं को शिक्षा दी जाती है। पास ही प्रिन्सिपल का बँगला बना हुआ है। सामने एक ही प्रकार के कमरों की कतार है। इसी बोर्डिङ्ग हाउस में विद्यार्थी लोग रहते हैं। विद्यार्थी लोग इसे अपना होस्टल बताते हैं। नर्स फाटक खोलकर प्रिन्सिपल के बँगले में घुस गई।

'हलो डीयर! हाउ आर यू?'—प्रिंसिपल ने कुरसी पर से उठते हुए कहा।

'थेंक यू प्रिन्सिपल।'

'कैसे आई?'

'फादर ने भेजा है। इस बच्चे को होस्टल में दाखिल करना है।'

'अच्छी बात है।'

दोनों बड़ी देर तक अंग्रेजी में बातें करते रहे।

मुन्नू को होस्टल में एक अलग कमरा दे दिया गया। सूर्य डूब चुका था और बिजली की बत्तियाँ होस्टल की लम्बी गेलेरी में प्रकाश डाल रही थीं।

होस्टल की इमारत तिमंजला थी। सबसे ऊपर की मंजिल का पहला रूम मुन्नू को दिया गया।

'ज्योर्जी, डीयर ब्वॉय! अब मैं जाती हूँ।'—नर्स ने कहा।

'तो मैं यहाँ अकेला रहूँगा?'

'हाँ, तुम्हें यहीं रह कर पढ़ना होगा, फ़िक्र मत करो ।'

'पर मुझे अकेले अच्छा न लगेगा ।'

'देखो, मैं रोज तुम्हारे पास आया करूँगी ।'

'तुम यहाँ न रहोगी ?—मुन्नू नर्स का हाथ पकड़कर, कातर दृष्टि से उसकी ओर देखता हुआ बोला ।

'ओह ! माई डीयर चाइल्ड'—कहते हुए नर्स ने उसके सिर को चूम लिया ।—'देखो, अब मैं जाती हूँ'—नर्स ने जाते हुए कहा ।

नर्स चली गई । मुन्नू गेलेरी में खड़ा-खड़ा उसे देखता रह गया । जब स्कूल के कम्पाउण्ड को छोड़ दूर सड़क पर वह अदृश्य हो गई, तब मुन्नू पास ही पड़ी आराम कुरसी पर पड़ गया । उसका हृदय रो रहा था—हाय ! कैसे अद्भुत और नये शहर में वह आ गया है ? उसे अपने गाँव की, वहाँ के सुखी जीवन को—वहाँ से चल देने की, और इसके बाद जो-जो विपत्तियाँ उस पर पड़ी थीं, सबकी याद आने लगी । उसके हृदय में तूफान-सा उठ खड़ा हुआ । एक ओर स्वदेश-प्रेम, स्वदेशाभिमान और पुरानी प्रणाली उसे खींचती थीं ; एक ओर यह दयालु मूर्त्तियाँ । क्या वे सचमुच ही उससे प्रेम करती हैं, या उनके प्रेम में कोई स्वार्थ है ?

दूर, दूर, काली-काली टेकरियाँ धुँधली-सी दिखाई दे रही थीं । गाँव की बत्तियाँ जल रही थीं । रास्ते पर एक टाँगा जा रहा था ।

वह कमरे में जाकर खाट पर लेट गया । इधर-से-उधर

करवटें बदलता रहा। नींद न आई। उठ खड़ा हुआ। बाहर गेलेरी में आया। काली अँधेरी रात थी। आकाश में असंख्य तारागण थे, उनका मन्द-मन्द प्रकाश, स्कूल बिल्डिङ्ग पर, खेल के मैदान पर, बाग पर, शहर पर, और दूर की टेकरियां पर पड़ रहा था।

वह खड़ा-खड़ा घण्टों यह दृश्य देखता रहा।

१६

ज्योर्जी, हमारा मुन्नू, इस नये वातावरण में घुल-मिल जाने लगा है। कई महीने व्यतीत हो चुके हैं। प्रथम तो उसे बहुत दुःख हुआ ; पर ज्यों-ज्यों दिन बीतते गये, उसके भाव पलटते गये।

हमेशा प्रातःकाल जल्दी उठ, उसे विद्यार्थियों के साथ कसरत करनी पड़ती, स्नान के पश्चात् बाइबिल पढ़नी पड़ती, एक ही मेस में खाना पड़ता। शाम को स्कूल से छूटते ही मैदान में क्रिकेट खेलना पड़ता। रविवार के दिन शाम को, वह आस-पास की टेकरियों पर घूमने चला जाता। नर्स भी कभी-कभी मुन्नू से मिलने आती, और दोनों साथ ही घूमने जाते। रविवार के सिवा वे बाहर घूमने न जा सकते। उसी रोज स्नान कर अच्छे कपड़े पहन, सब विद्यार्थियों को प्रातःकाल गिरजाघर में जाना पड़ता। चुपचाप फादर के उपदेश को सुनना पड़ता।

घर की राह

मुन्नू को ड्राइंग से विशेष प्रेम था, इससे उसे अंग्रेजी के साथ-साथ ड्राइंग की शिक्षा दी जाती। इस कला में उसकी प्रवीणता देख मास्टर लोग उसकी प्रशंसा करते। जिस क्लास में वह पढ़ता था, उसमें बहुत-सी लड़कियाँ भी पढ़ती थीं। अच्छे भोजन और अच्छे जल-वायु ने उसके शरीर पर भी अच्छा असर किया था। सुदृढ़ शरीर वाले, ड्राइंग में प्रथम रहने वाले इस बालक से, क्लास की लड़कियाँ बोलना चाहतीं, उसका प्रेम संपादन करना चाहतीं ; पर मुन्नू—ज्योर्जी—किसी से न बोलता। एकान्त ही अधिक पसंद करता।

इस प्रकार दिन बीतते गये। एक दिन शाम को वह स्कूल के बाग़ में बेंच पर बैठा था। इतवार की तातील के कारण सब विद्यार्थी बाहर घूमने गये थे। वह अकेला ही बाग में था। आज चर्च में दिये फादर के उपदेशों पर विचार कर रहा था। मन व्याकुल था। कारण समझ में न आ रहा था। उसका कोई साथी भी न था कि जिससे वह अपने हृदय के भावों को प्रकट करे। वह यहाँ के वातावरण में मिलता जा रहा था। आज न जाने क्यों उसे अपने ऊपर ग्लानि होने लगी। उसे अपने गाँव में बिताये हुए सुखी जीवन की याद आने लगी। वह कैसा मूर्ख है, कितना धिक्कार-पात्र है कि उसने इस वातावरण में अपने प्रेमी-जनों को भुला दिया है! आज रानी जीजी की भी याद नहीं आती। और न उन बाल्य मित्रों की—शैल और कल्लू की—याद आती है। न उस मुन्नी की याद आती है, जिसके साथ उस

रात को वह उस बाग़ में सोया था। अच्छे कपड़े पहन कर इधर से उधर घूमा करता है। वह कितना कृतघ्न है ?

सहसा, शाम को मन्दिरों में बजते शंख, घंटा-घड़ियालों की उसे याद आने लगी। आरती के समय जब कुत्ते भूँकने लगते, तब वह भी आरती गाने लगता था। महादेवजी की आरती, और रानी जीजी की मूर्ति उसकी आँखों के सामने नाचने लगी। फिर गिरजाघर सामने दिखाई दिया। लॉर्ड क्राइस्ट की दयाजनक, प्रेममयी मूर्ति सामने खड़ी हो गई। क्या यह दोनों भिन्न हैं ? उसका हृदय आत्म-ग्लानि से भर उठा।

सामने की क्यारी की ओर से एक बाला फ्राक पहने आती दिखाई दी। वह उसके पास आकर खड़ी हो गई। मुन्नू को देखकर ज़रा विस्मित होते हुए कहा—मुन्नू !

'एं ! मुन्नी ?'—मुन्नू चौककर बोल उठा।

'नहीं, अब मुन्नी नहीं, मिस लीना।'

'अच्छा, मिस लीना ! तुम यहाँ कैसे ?'

'मैं भी आगई, तक़दीर ले आई।'

'चलो नीचे उस लॉन पर बैठें।'

दोनों लॉन की हरी दूब पर बैठ गये। कितना अन्तर उस मुन्नी में और इस लीना में था ? कहाँ वह उलझे हुए मैले बाल, फटी कुरती और घघरी, और कहाँ यह कन्धों पर लटकती अलक राशि, स्वच्छ सफ़ेद जाँघिया और फ्राक ?

'लीना ! तुम्हे देख मेरा हृदय आनंद से भर गया। तुम

आज कितनी सुन्दर दिखाई देती हो !'

मुन्नू, तुम्हारा नाम ?'

'मेरा नाम ? मेरा नाम ज्योर्जी !'

'ज्योर्जी ! सचमुच तुम बड़े अच्छे हो'—लीना हँसती हुई बोली।

'तुम यहाँ कैसे आई ? उस रात को कहाँ भाग गई थीं ? मुझे बार-बार तुम्हारी याद आती थी।'—ज्योर्जी ने एक साथ प्रश्न कर डाले।

'ज्योर्जी ! मेरी कहानी सुनके क्या करोगे ?'

'क्या करूँगा, तुमही जानो।'

'ठीक है; पर देखो, इवनिंग प्रेयर्स का समय हो गया है। अभी चलो, फिर बातें करेंगे।'

'अच्छा चलो।'

दोनों चल दिये। लीना को देख ज्योर्जी के हृदय में प्रेम और सहानुभूति का झरना बहने लगा। कितनी सुन्दर बाला है ! दुबली-पतली देह, सुन्दर मुखमंडल; तिस पर बिखरी सुहावनी अलक राशि ! ज्योर्जी लीना का हाथ पकड़े चल दिया।

टेनिस कोर्ट पर बाइबिल में से प्रार्थना की गई।

'सच्चा धर्म क्रिस्टीयानिटी है। सबसे बड़े प्रभु क्राइस्ट हैं। संसार को मुक्ति तभी मिलेगी, जब वह ईसाई धर्म स्वीकार करेगा'—यह शब्द, प्रेयर्स से लौटते मुन्नू के हृदय में गूँजने लगे। क्या यह बात सच है ? क्या उसका धर्म झूठा है ? रानी जीजी का धर्म झूठा

है ? जिस शिवलिंग की पूजा रानी जीजी करती थीं, क्या वह भी झूठा है ? क्या महादेवजी ईश्वर नहीं हैं ? उसका हृदय इस बात को स्वीकार न कर सका।

'लीना, चलो मेरे रूम में।'

'अब रात हो गई।'

'हो जाने दो, इससे क्या। कह देना घूमने गई थी।'

'अच्छा चलो।'

ज्योर्जी लीना के साथ अपने रूम में आ गया।

'बैठो इस कुरसी पर।'—कुरसी खींचते हुए मुन्नू ने कहा। आप खाट पर बैठ गया।

'लीना, सच कहो। तुम यहाँ कैसे आईं ?'

'सच कहूँ ?'

'देखो, उस रात को हम साथ-साथ सोये थे—याद है ?'

'हाँ, याद है।'

'सुबह मैं जल्दी उठ खड़ी हुई और शहर में माँगने को चल दी। रास्ते में एक्सीडेंट हुआ। मेरे सिर में सख्त चोट आई और मैं वहीं पर मूर्च्छित होकर गिर पड़ी। कहते हैं, उसके बाद उसी मोटर में मुझे यहाँ लाया गया और यहाँ के अस्पताल के फीमेल वार्ड में रक्खा गया। महीनों तक यहाँ बीमार रही।'

'मैं भी इसी अस्पताल में बीमार पड़ा था।'

'मैं जानती हूँ।'

'मुझे तो मालूम न हुआ।'

'न हुआ होगा।'

'तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि मैं यहाँ बीमार था ?'

'नर्स ने कहा था।'

'लीना, वे बड़ी दयालु हैं।'

'मुझसे भी बड़ा स्नेह करती हैं।'

'लीना, ये लोग मुझे यहाँ क्यों ले आये हैं ?'

'तुम बड़े सीधे हो ज्योर्जी ! गरीब, नीच जाति के हिन्दुओं को ये लोग यहाँ ले आते हैं।'

'क्यों लीना ?'

'अपने धर्म में मिलाने के लिए।'

'तो क्या इनका धर्म और हमारा धर्म भिन्न-भिन्न है ?'

'और क्या। वे ईसाई हैं, हम हिन्दू।'

'लीना ! अगर हिन्दू और ईसाई दोनों एक होते ?...तुम्हें अपना धर्म छोड़ना अच्छा लगेगा ?'

'मुझसे धर्म की बात न कहो। मैं धर्म-कर्म कुछ नहीं जानती।'

'लीना, ऐसा न कहो। मुझे न जाने क्या होता है, जब मैं अपना धर्म छोड़ने की बात का विचार करता हूँ !

'तो क्या तुम अपना धर्म छोड़े बिना यहाँ रह सकोगे ?'

'मुझे नहीं मालूम।'

'माइकेल कहता था कि इस क्रिसमस को तुम्हारा बेप्टिज़्म किया जायगा।'

'लीना ! लीना ! ऐसा न कहो। न जाने मुझे क्या होता

'है !'—कहते-कहते मुन्नू खाट पर लेट गया ।

लीना कुरसी से उठकर उसके पास खाट पर बैठ गई ।

'लीना' तुम मुझसे छोटी हो फिर भी तुम्हें कितना ज्ञान है'—ज्योर्जी बोल उठा ।

'ज्योर्जी ! मैं सब जानती हूँ; क्योंकि मैंने तुमसे अधिक दुःख सहा है । आज चार वर्षों से मैं इसी तरह भटकती फिर रही हूँ। मैंने अपने पेट के लिए अनेक पाप किये हैं । मैं भीख माँगते हुए गली-गली भटकी हूँ, मैंने ठोकरें खाई हैं और जूते भी खाये हैं । मेरे ऊपर पुलीस वालों ने भी अत्याचार किये हैं और सेठ-साहूकारों ने भी । मैं नाची-कूदी भी हूँ, रोई-गाई भी हूँ, इसी से संसार को तुमसे अधिक जानती हूँ—जानने का दावा रखती हूँ ।'—लीना जरा वेग से बोली ।

'लीना ! लीना ! आज मुझे अपना भूतकाल याद आ रहा है । मेरे नेत्रों का नीर आज सूख गया । मुझे रोना भी नहीं आता, मैं क्या करूँ ?'

'ज्योर्जी ! तुम्हें क्या हो गया है ?'

'क्या बताऊँ लीना, कुछ समझ में नहीं आता । जाओ तुम्हें देर होती होगी ।'—कहकर ज्योर्जी बिस्तर पर बैठ गया ।

'नहीं, कोई हर्ज नहीं ।'

'नहीं जाओ, सुपरिन्टेण्डेण्ट नाराज़ होगा ।'

'अच्छा, तो जाती हूँ ।'

लीना मुन्नू से हाथ मिला, अपने रूम की ओर चली गई ।

मुन्नू खाट पर लेटा रहा। उसे वह दिन याद आया, जब पहले पहल वह इस रूम में आया था। उस दिन उसे कितना दुःख हुआ था ? आज वैसा ही दुःख उसे फिर हो रहा था। वह मर जायगा ; पर अपना धर्म न छोड़ेगा।

वह खड़ा हो गया। बाहर गेलेरी में खड़ा-खड़ा होस्टल के ऊपर से झाँकते चाँद को और सारे शहर और दूर-दूर की टेकरियों को आलिंगन करती चाँदनी की छटा को देखने लगा।

लीना ने सचमुच अधिक दुःख सहा था, इसी से वह संसार को अधिक जान गई थी। उसके निर्मल-कोमल भाव इन कष्टों से कुचल गये थे। इसी से वह भावना-शून्य हो गई थी। जैसा समय हो, वैसा ही रहना उसका सिद्धान्त-सा बन गया था। पर, जब से उसने इस भोले मुन्नू को देखा था, तब से दबे हुए कोमल भाव फिर से अंकुरित होने लगे थे। तभी से मुन्नू के लिए उसके हृदय में एक भाव उत्पन्न हो गया था, जिसे वह न समझ सकी थी ; पर उस भाव को लीना ने अपने हृदय में छिपा रक्खा। संसार को जानने वाली एक समझदार लड़की, एक अनजान अल्हड़ लड़के को कैसे अपना हृदय दिखा दे ?

'लीना डीयर !'—लीना के रूम में घुसते ही माइकेल ने कहा।

'यस माइकेल, कम इन !'—लीना बोली।

माइकेल कुरसी खींच कर बैठ गया।

'लीना, सेक्रेटरी कहते थे, कि जब तुम मैट्रिक पास कर लोगी, तब तुम्हें हेड मिस्ट्रेस बनाया जायगा।'

'अच्छी बात है, अभी तो कई वर्ष बाकी हैं ? और तुम्हें क्या बनाएँगे ?'

'ओह, मुझे ? मुझे किसी गाँव का मास्टर !'

'अच्छा ?'

'लीना......!'

'क्या रुक क्यों गये ?'

'कुछ नहीं...।'

'फिर भी ?'

'ज्योर्जी की क्या राय है ?'

'किस बात में ?'

'बेप्टिज़्म के सम्बन्ध में।'

'वह बड़ा कट्टर है।'

'और तुम्हारी क्या राय है ?'

'कुछ भी नहीं। मेरा कोई धर्म ही नहीं है।'

'फिर भी ?'

'कुछ नहीं।'

'कुछ नहीं ?'

'हाँ, कुछ नहीं।'

'अच्छा, जाता हूँ।'

'बस ?'

'बस डीयर !'—कहता हुआ वह उठकर खड़ा होगया। माइकेल भी एक विद्यार्थी है। लीग का कार्यकर्त्ता है। जो

अनाथ बालक-बालिकाएँ यहाँ आती हैं, उन्हें वह क्रिस्तान बनाने का प्रयत्न करता रहता है।

उस साल मुन्नू का बेप्टिज्म न किया गया।

मुन्नू अब पढ़ने में खूब चित्त लगाता है। लीना और ज्योर्जी में घनिष्ठता बढ़ने लगी है। एतवार को दोनों साथ-साथ घूमने जाते हैं। नर्स की शादी हो जाने से वह चली गई है। लीना के सिवाय ज्योर्जी का वहाँ अब कोई मित्र नहीं रह गया है।

१७

मनुष्य के जीवन में एक दिन ऐसा भी आता है, जब उसका हृदय किसी अनुपम आनन्द से, उल्लास से, उत्कण्ठा से और प्रेम से नाचने लगता है। उसके हृदय में आनन्द का समुद्र लह-राने लगता है और वह वस्तुमात्र को प्रेममय—आनन्दमय—ही देखता है। ज्योर्जी भी आज ऐसा ही आनन्दानुभव कर रहा है। इसका कारण वह समझ न सका। प्रातःकाल की ठंडी हवा उसकी खाट के ऊपर की खिड़की में से होकर आ रही थी और सामने टँगे लार्ड क्राइस्ट के चित्र को हिला रही थी।

'कु हू, कु हू, कु हू' कोयल बोली। खाट पर लेटा-लेटा ज्योर्जी कोयल की कुहुक सुनता रहा। आज तीन वर्षों में पहले-पहल कोयल की कुहुक ने उसके हृदय को हिलाया। लेटा-लेटा, आँखें मूँदे वह स्वर्गीय सुख अनुभव करने लगा। अहा ! कितना

मीठा स्वर ! और कितनी शीतल मधुर वायु उसके अंगो को स्पर्श करती, उसके कुरते को हिलाती हुई चली जा रही है।

वह उठ खड़ा हुआ, और खिड़की में से देखने लगा। दूर हरे पहाड़ों के ऊपर आकाश ने कितना मनोहर, सुरम्य, केसरिया रंग चढ़ा रक्खा था ? पूर्व दिशा ने कितनी सुन्दर गुलाबी साड़ी पहन रक्खी थी ? उषा क्यों इतना मृदु हास्य कर रही थी ? क्या वह कवि हो गया है? ऐसे भाव तो कवियों के हृदय में ही उठा करते हैं। आम और नीम के वृक्ष वायु से डोल रहे थे। फिर से कोयल कुहुकने लगी। उसे अपने बचपन के दिन याद आ गये। आँगन में खाट पर लेटा-लेटा वह आम्र-कुंजों में कुहुकती कोयलों की तानें सुना करता था। शैल बाबू और कल्लू के साथ इन्हीं आमों के नीचे केरियाँ ढूँढने जाया करता था। आज क्यों याद आ रही है, जीजी की ?

वह कुरसी खींचकर खिड़की के सामने बैठ गया, और सामने का दृश्य देखता रहा। फिर पेन्सिल और कागज उठा कुछ स्केच करने लगा। उसके हृदय के भाव उस कागज पर चित्रित होने लगे। हम उसे श्रेष्ठ चित्रकार तो नहीं कह सकते; पर रोते-रोते अपने गाँव में बाबूजी के घर की दीवारों पर कोयलों से लकीरें खींचने वाले मुन्नू को चित्र-कला अच्छी तरह आ चुकी थी। वह चित्र बनाने में तल्लीन हो गया।

'हलो ज्योर्जी ! क्या कर रहे हो ?'—मुन्नू के कानों में शब्द पड़े।

घर की राह

मुन्नू ने पीछे की ओर देखा।

'हलो लीना, कम आन! टेक योर सीट'—दूसरी कुरसी खींचते हुए ज्योर्जी ने कहा।

'ज्योर्जी! आज तुम बड़े प्रसन्न दिखाई दे रहे हो! क्या बात है?'—मन्द-मन्द मुसकाते हुए ज्योर्जी के कन्धे पर हाथ रखकर लीना बोली।

'यस डीयरी! मैं आज बड़ा प्रसन्न हूँ। रोम-रोम से आनंद बह रहा है।'

'क्या बात है ज्योर्जी?'

'बात क्या है, आनन्ददायिनी मेरे सम्मुख जो खड़ी है!'

'रहो!'—कहते हुए लीना ने एक हलकी-सी चपत ज्योर्जी के गाल पर जमा दी। फिर अपनी कुरसी पर बैठ गई।

'क्या बना रहे हो? तुम तो बड़े आर्टिस्ट बने जा रहे हो।'

'हाँ लीना, मैं आर्टिस्ट बनना चाहता हूँ।'

'यह किसका चित्र है?'

'ज़रा ठहरो। मैं अभी तुमसे बातें करूँगा।'

ज्योर्जी चित्र बनाता रहा। आम्र-कुंज है। डाली पर एक उन्मत्त कोयल मुँह खोले बैठी है। नीचे दो बालाएँ खड़ी हैं। दोनों ही सौन्दर्य की प्रतिमा हैं। दोनों के हाथों में कुछ है। कोयल को पुकार कर मानों वे अपने पास बुला रही हैं।

'अहा ज्योर्जी! कितना सुन्दर चित्र है?'

हाँ, वे देवियाँ भी तो सौंदर्य की प्रतिमा हैं।'

'हाँ ज्योर्जी! बताओ तुम इनमें से किसे अधिक प्यार करते हो ?'

'यह क्यों पूछती हो लीना ?

'यों ही।'

'दोनों को।'

'सच ?'

'हाँ, सच।'

'आज गेदरिंग न जाओगे ?'

'जाऊँगा।'

'उसी के लिए यह चित्र है ?'

'हाँ।'

'तुम्हें आज प्रथम पारितोषिक मिलेगा।'

'एं! पारितोषिक क्या ?'

'रहो भी, मज़ाक करते हो ?'

'नहीं।'

'तब ?'

'तब पारितोषिक क्या ?'

'इनाम।'

'इनाम कौन देगा ?'

'मैं!'

'कैसे ?'

'ऐसे!'—कह लीना ने फिर से एक हलकी चपत ज्योर्जी के जमा दी।

'लीना ?...'

'क्या ?'

'तुम देवी हो।'

'अच्छा ! देवी कैसी होती है ?'

'देखो, तुम मज़ाक करने लगीं !'

'यह चित्र किसका है ?'—लीना ने चित्र को खींचते हुए कहा।

'लीना ! यह चित्र......यह चित्र......मेरे हृदय का भाव है। आज मुझे जीजी की याद आ रही है। एक वह है और एक तुम हो लीना, जो इस अभागे अनाथ पक्षी को चारा दे रही हो। नहीं तो यह पक्षी कब का उड़ गया होता।'

'ज्योर्जी, आज तुम कवि के जैसी बातें कर रहे हो !'

'नहीं लीना ! यह बात नहीं है, मेरे भावों को तुम नहीं समझ सकतीं।'

'ज्योर्जी ! तुम्हारी रानी जीजी बड़ी सुन्दर हैं ?'

'हाँ लीना ! वे बड़ी सुन्दर हैं। सौंदर्य की प्रतिमा हैं। निर्दोषता की प्रतिमूर्ति हैं। प्रेम की खान हैं। दयालुता की पराकाष्ठा हैं। लीना, आज मेरा जीवन उन्हीं के कारण है। मैं अन्धकूप में—अत्याचार के अन्धकूप में—जीजी की ही प्रेरणा से, प्रेम के बन्धन से, नहीं पड़ सका हूँ। जीजी मेरी देवी हैं। मैं मरण-पर्यन्त जीजी को न भूलूँगा। कितना सरल स्वभाव है जीजी का ? मेरा हृदय आज जीजी के दर्शन को तरसता है'—कहते-कहते ज्योर्जी के नेत्रों में से दो अश्रु-बिन्दु टपक पड़े।

लीना ज्योर्जी का मुँह ताकती रही। कुछ न बोली।

'लीना, बोलती क्यों नहीं, चुप क्यों हो ?'

'कुछ नहीं ज्योर्जी, कल हम दोनों को अपना धर्म छोड़ना होगा। कल हमारा बेप्टिज़्म होगा।'

एकाएक ज्योर्जी का चेहरा उदास हो गया। उसके मुँह से एक निःश्वास निकल गया।

'क्यों ज्योर्जी ?'

'कुछ नहीं लीना।'

'फिर भी ?'

'मत पूछो लीना।'

'अच्छा, तो मैं जाती हूँ। लाओ तुम्हारा चित्र भिजवा दूँ।

'आज शाम को चलोगे न।'

'हाँ लीना, ले जाओ। चर्च में हम दोनों साथ ही चलेंगे।'

'अच्छा।'

लीना अपने रूम की ओर चली गई। उसने माइकेल के हाथ ज्योर्जी का चित्र प्रिन्सिपल के पास भिजवा दिया। आज शाम को स्कूल का गेदरिंग चर्च में होने वाला है। चित्रकारों को लेखकों को, वक्ताओं को और प्रथम उत्तीर्ण हुए विद्यार्थियों को इनाम मिलने वाला है। साथ ही क्राइस्ट सेवा-लीग की वार्षिक रिपोर्ट भी सुनाई जाने वाली है। क्राइस्टपुर में आज उत्साह है—उल्लास है। चारों ओर मानो आनन्द-स्रोत बह रहा है। अच्छे-अच्छे कपड़े पहन नेटिव ईसाई लोग चर्च में जाने की तैयारी कर रहे हैं।

चित्र को माइकेल-द्वारा प्रिन्सिपल के घर पहुँचाने के पहले माइकेल, सेक्रेटरी और लीना में बड़ी देर तक बातें होती रहीं।

ज्योर्जी का प्रातःकाल का आनन्द शोक के रूप में परिणत हो गया। उसका हृदय धड़कने लगा। आज तीन वर्षों से वह इसी गाँव में रहता है, चर्च में जाता है। समर्न्स सुनता है, फिर आज इतना शोक क्यों? क्या उसे कल अपना धर्म छोड़ना होगा? क्या सचमुच ही उसका बेप्टिज़्म-संस्कार किया जायगा। यह दयालु देवता लोग क्यों उसे अपने ही धर्म में नहीं रहने देते? वह एक ईसाई की भाँति तो रहता ही है। वह चर्च में जाता है, मास और समर्न्स सुनता है और क्राइस्ट को देवता की तरह पूजता है। फिर उसे यों ही क्यों नहीं रहने दिया जाता? वह खड़ा हो गया। रूम में टहलने लगा। क्या वह अब हिन्दू न रहेगा? क्या वह अब महादेवजी को न मान सकेगा? उनकी पूजा न कर सकेगा? वह व्याकुल हो गया। सहसा सामने टँगे लार्ड क्राइस्ट के चित्र पर दृष्टि पड़ी। वह घुटने टेक कर नीचे बैठ गया।

'देव! आप कितने दयालु हैं, आपके मुख-मंडल से दया और प्रेम टपक रहा है! क्या आप मेरी रक्षा न करेंगे? संसार के सुख के लिए आपने अपने प्राण तक न्योछावर किये हैं देव! क्या आप यह चाहते हैं कि आपका पुत्र अपना धर्म छोड़ दे?'—व्याकुलता बढ़ने लगी। टोपी सिर पर रख वह बाहर निकल गया।

पाँच बजे होंगे। ज्योर्जी ने अपने ट्रंक में से बढ़िया सूट

निकाला। डबल ब्रेस्ट हाफ़ कोट और पेण्ट पहना। आईने के सामने खड़ा हो बाल सँवारने लगा।

'हलो ज्योर्जी !'—लीना ने आवाज़ दी।

'कम इन लीना डीयर।'

'यस, कमिंग।'

'अहा ! कितनी सुन्दर लगती हो लीना !'—ज्योर्जी ने उसकी ओर देखते हुए कहा।

आसमानी कलर के फ्राक और जांघिये के नीचे पैरों में रेशमी मोजे पहने, बालों में रिबन लगाये लीना के चेहरे पर एक अनुपम हास्य चमक उठा।

'वाह ! खूब बनाते हो, मुझे तो तुम सुन्दर लग रहे हो !'

'लीना डीयर ! मैं एक...'—लीना की बड़ी-बड़ी मधुभरी आँखों की ओर देखता हुआ वह बोला।

'क्या ?...'

'वन किस !'

'यह क्यों ?'

'क्योंकि आज तुम बड़ी सुन्दर दिखाई दे रही हो !'

ज्योर्जी ने उसका हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा और एक चुम्बन उसके कपोलों पर अंकित कर दिया। क्षण भर के लिए लीना ने भी ज्योर्जी को आलिङ्गित कर लिया।

'अच्छा ज्योर्जी, अब चलो, देर हो रही है।'—लीना बोल उठी।

'हाँ, चलो।'

दोनों चल दिये। चर्च के दरवाजे पर भीड़ लगी थी। फाटक के अन्दर घुसते ही दाहिनी ओर ग्रेव यार्ड दिखाई पड़ा। ग्रेव यार्ड में खड़े वृक्षों पर लताएँ छा रही थीं। घने वृक्षों और लताओं के समूह के कारण दोपहर को भी यहाँ सूर्य का प्रकाश बहुत कम आता था।

चर्च के भीतर पहुँचे। सभी लोग अच्छे-अच्छे सूटों में सज कर आये थे। सभी बेंचों पर बैठे हुए थे। लीना और ज्योर्जी भी एक बेंच पर बैठ गये। कई युवक युवतियों का ध्यान इनकी ओर आकर्षित हुआ।

सामने के स्टेज का परदा उठा। स्कूल की छोटी लड़कियों ने लार्ड क्राइस्ट की सेवा और प्रशंसा का गीत गाया। फिर हेम-लेट, मैकवेथ और सेंट जॉन के नाटकों में से एक-एक अंक खेले गये और परदा गिर गया।

फिर परदा उठा। फेल्ट हेट और चाइना सिल्क का सूट पहने प्रिन्सिपल ने स्टेज पर आकर सबको अभिवादन किया। पश्चात् स्कूल की वार्षिक रिपोर्ट पढ़ सुनाई और कहने लगे—'वर्दी लेडीज एन्ड जेन्टलमन,

सौभाग्य की बात है कि ऐसे विकट समय में भी हमारा कार्य इतना अच्छा चल रहा है, यह लॉर्ड की दयालुता का ही फल है। और फादर-जैसे दयालु कार्यकर्ताओं के परिश्रम का नतीजा है, मैं फादर मूर से प्रार्थना करता हूँ कि वे स्टेज पर आकर इस आसन पर विराजें और अपने उन बालकों को, जो प्रथम उत्तीर्ण

हुए हैं और जिन्होंने इस साल अपनी कार्य-कुशलता दिखाई है, उन्हें इनाम देने की कृपा करें। इनमें से अधिकांश का बेप्टिज्म हो चुका है—तीन-चार का शायद कल होने वाला है।'

प्रिन्सिपल साहब के बैठते ही फादर मूर, स्टेज पर रक्खी एक कुरसी पर बैठ गये। सामने एक नये सुन्दर टेबल क्लाथ से ढँका टेबुल रखा था।

'ज्योर्जी, तुम्हें इनाम मिलेगा।'

'मुझे इनाम !'

'हाँ, तुम्हें।'

'मेरा ऐसा भाग्य कहाँ'—कहकर मुन्नू जरा उदास-सा हो गया।

'तुम उदास क्यों हो गये ?'

'नहीं लीना, मैं उदास कहाँ हुआ।'

प्रिन्सिपल ज्यों-ज्यों नाम बोलते गये, त्यों-त्यों, आगन्तुकों में से, एक व्यक्ति खड़ा हो स्टेज पर आता और इनाम ले अपनी जगह पर चला जाता।

ज्योर्जी की दृष्टि भी प्रिन्सिपल से मिली।

'ज्योर्जी ! फर्स्ट प्राइज़ फार ड्राइङ्ग।'

ज्योर्जी स्टेज पर चला गया।

'यह बालक तीन साल से हमारे स्कूल में पढ़ता है। कल इसका बेप्टिज्म होगा। इसने दो बहुत अच्छे चित्र बनाये हैं। एक लार्ड क्राइस्ट का और दूसरा यह—कह कर प्रिन्सिपल ने आज

प्रातःकाल बनाया हुआ चित्र उपस्थित जन-समूह को दिखाया।

'इधर आओ!'—फादर ने मुस्कराते हुए कहा।

'ज्योर्जी फादर के पास चला गया। फादर ने हँसते हुए उससे हाथ मिलाया और उसके इनाम का लिफाफा उसके हाथ में दे दिया।

ज्योर्जी शेक हैन्ड कर अपने स्थान पर आकर बैठ गया। बैठते ही लीना ने हाथ मिलाकर उसे बधाई दी। ज्योर्जी हँस दिया। लीना ने ज्योर्जी के हाथ से इनामी लिफाफा ले लिया।

इनाम के बँट जाने के बाद लीग के सेक्रेटरी ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट पढ़नी शुरू की—

'लेडीज़ एण्ड जेण्टलमन,

'सेवा लीग की वार्षिक रिपोर्ट पढ़ते हुए मुझे हर्ष हो रहा है। प्रसन्नता की बात है कि गये साल से इस साल की रिपोर्ट अधिक अच्छी है। इस साल हमारी संस्था तीस बालकों को इस गाँव में लाई है। इनमें से बीस अछूत हैं, पाँच चमार, कोली वगैरह, तीन अनाथ मुस्लिम और दो अन्य जातियों के हैं। हिन्दू जाति में से इतने बालक हमें मिलते हैं; इसलिए हमें उन सनातनी हिन्दुओं को शतशः धन्यवाद देना चाहिए, जो अछूतपन को, मर मिटने पर भी नहीं मिटाना चाहते। इस वर्ष इनमें से दस को बेप्टाइज़्ड किया है। हमने कार्य-क्रमानुसार बेप्टिज़्म के पहले ही इन बच्चों का नामकरण करना जारी रक्खा है; ताकि बेप्टिज़्म होने के पहले ही वे हमारे इस वातावरण में मिल जा

सकें। उनके हृदय में हमारे धर्म के लिए प्रेम उत्पन्न हो जाय।

हम किसी को अपना धर्म छोड़ने का फोर्स नहीं करते; पर उन अनाथ बालकों को, जिन्हें न तो उनके धर्म को उच्च जातियाँ ही पालना चाहती हैं और न गवर्नमेण्ट ही, हम पाल लेते हैं, उच्च शिक्षा देते हैं, और साथ-साथ अपने धर्म का ज्ञान भी कराते हैं। जब वे इस वातावरण में मिल जाते हैं, उन्हें हम क्रिश्चियन बना लेते हैं। यह हमारा धर्म है; क्योंकि हम मानते हैं कि संसार का तभी कल्याण होगा, जब वह हमारा धर्म स्वीकार करके लार्ड क्राइस्ट के वचनानुसार चलेगा। उनके बताये धर्म का पालन करेगा।

हर्ष की बात है कि कल बेप्टिज्म की क्रिया फादर मूर-द्वारा की जायगी। चार लड़कियाँ और चार लड़के कल बेप्टाइज्ड किये जायँगे।

लड़कियों के नाम—मिस रोन, मिस केरोलिन, मिस कुक और मिस लीना हैं।

लड़कों के नाम—मि० हेरोल्ड, मि० अब्राहम, मि० पिली और मि० ज्योर्जी हैं।

ज्योर्जी एक अछूत लड़का; पर हमारे लिए छूत-अछूत का कोई भेद नहीं है। सब एक हैं। आशा है, आप लोग कल यहाँ पधार कर इस संस्कार में सम्मिलित होने की कृपा करेंगे।

खेद की बात तो यह है कि समाचार-पत्रों-द्वारा हरिजन-आन्दोलन होने लगा है और माना जाता है कि महात्मा गांधी

भी थोड़े ही समय में इस कार्य को आरम्भ करेंगे। यदि यह हुआ, तो हमारे कार्य में अवश्य बाधा आयेगी। इसके अनेक कारण हैं। जितने मनुष्य सन् १८९९ के बाद इस लीग के द्वारा कन्वर्ट किये गये हैं, उनमें से अधिकांश अछूत हैं। हमने यह देखा है कि छोटी जातियों में विद्या के प्रति प्रेम बढ़ता जा रहा है। इन अछूत बालकों को स्कूल में पढ़ने नहीं दिया जाता। अतः हमने अछूतों को पढ़ाने के लिए आसपास के गाँवों में स्कूल खोल रक्खे हैं। बालकों को हम पढ़ाते भी हैं और साथ-साथ उन्हें अपने धर्म का उपदेश भी करते हैं। फल यह होता है कि इन बालकों में से साठ फी सदी, हमारा धर्म स्वीकार करने को तैयार हो जाते हैं।........'

रिपोर्ट खतम होते ही तालियाँ बज उठीं। आज का कार्य समाप्त हो गया।

संध्या हो चली थी। सब लोग बातें करते बाहर निकल आये। लीना और ज्योर्जी दोनों साथ ही बाहर आये। मित्रों ने ज्योर्जी को बधाई दी।

अन्धकार फैलने लग गया था। ग्रेवयार्ड के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष, लताओं की गहरी नीलिमा और सरोवर, यह सब एक अनोखा भाव उत्पन्न कर रहे थे। दोनों ग्रेव यार्ड में चले गये। कितना गम्भीर वातावरण था! पुराने चर्च के इर्द-गिर्द की दीवारों पर लता-वल्लरियाँ छा रही थीं। आस-पास टुंब स्टोन्स दिखाई दे रहे थे। सरोवर के पास वृक्षों पर सर्पों की भाँति लताएँ लटक

रही थीं, यहीं पर इन पत्थरों के नीचे, जिन पर घास उग आई थी, अनेक मनुष्य अपनी गहरी नींद में सोये होंगे—ज्योर्जी सोचने लगा।

'डीयर ज्योर्जी ! यह दस रुपये का नोट मेरा है न ?'

'हाँ लीना, तुम्हारा ही है, मेरा क्या है इसमें !'

'आज तुम गंभीर क्यों दिखाई देते हो ?'

'लीना, इसी जगह अनेक बूढ़े और जवान गड़े होंगे। देखो तो, सायंकाल के अन्धकार में, यह दृश्य कैसी अनाखी भावनाएँ उत्पन्न करता है।'

'हाँ ज्योर्जी !'—उसके कंधे पर हाथ रखती लीना बोली।

'चलो, यहीं बैठ जायँ ?'

'हाँ, इसी टूंब स्टोन पर।'

दोनों एक लंबी-सी चट्टान पर बैठ गये, जिसके आसपास घास उग आई थी। सामने ही लता से ढकी दीवार थी। सामने की पहाड़ियों के ऊपर भगवान् अंशुमाली के दर्शन हुए।

'देखो लीना ! वह चाँद भी आ रहा है ; इस जगह चिरकाल से सोये व्यक्तियों को अपनी ज्योत्स्ना से शीतल करने के लिए। देखो वह अपने उज्ज्वल प्रकाश को फैला रहा है, इस शान्त—शून्य—निर्जन ग्रेव यार्ड पर।'

'ज्योर्जी ! तुम आज ऐसी बातें क्यों कर रहे हो ?'

'कैसी बातें लीना ?'

'ऐसी गहरी फ़िलॉसफी से भरी बातें तो तुमने कभी नहीं

की थीं। मैं जाती हूँ।'

'क्यों ?'

'क्योंकि रात हो चली है।'

'अभी चलते हैं लीना, बैठो।'

'अच्छा ; पर ज्योर्जी.. ...'

'क्या लीना ?'

'मुझे आज कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। मेरी समझ में नहीं आता —तुम्हें क्या हो गया है।'

'लीना ! तुम जानती हो, मुझे आज ऐसे विचार क्यों आ रहे हैं ?'

'नहीं।'

'सुनना चाहती हो ?'

'हां. अवश्य ज्योर्जी के ज्योत्सना से प्रकाशित मुँह की ओर देखती हुई लीना बोली।

लीना ! इस चांद की और चाँदनी को देख, आज मुझे अपने गाँव की चाँदनी भी याद आती है। एक दिन की बात तो रह-रह कर मेरा हृदय मसोस देती है।'

'वह क्या ?'

'ऐसी ही एक रात थी। आकाश में चाँदनी खिल रही थी। हम—रानी जीजी, शैल और कल्लू—खेतों में घूमने गये थे। कितने सुन्दर थे वे खेत ? चाँदनी रात में, हरे-हरे खेत पवन की लहरों से नाच रहे थे। हम वहीं पर बैठ गये, तब जीजी ने सती

पार्वतीजी की कहानी सुनाई थी। अहा! लीना, उस कहानी की याद आते ही मेरे शरीर में रोमांच हो आता है। दक्ष की पुत्री सती, अरण्यवासी पिनाकपाणि महादेव से प्रेम करती थीं। कितना उच्च, उत्तम था उनका प्रेम? जब सती अपने पिता के यज्ञ में, अपना अपमान होने से—अपने पतिदेव का अपमान होने से—अपने सतीत्व के प्रभाव से, अपने पैर के अँगूठे में से अग्नि की ज्वालाएँ निकाल, जल कर भस्मीभूत हो गईं थीं, तब शिवजी, मृगछाला पहने, गंभीर मुख मुद्रा से, उन लावण्यमयी सती को अपने कन्धे पर रख वन-वन प्रेमोन्मत्त हो भटकते फिरे थे। ओह! कैसा था उनका प्रेम? गिरि-गह्वरों में, विशाल अरण्यों में, नैसर्गिक सौंदर्य के मूर्त रूप हिमालय की तलहटी में सती को ले, उन्मत्त हो पागल की भाँति वे भटकते थे। प्रेम का कितना उच्च आदर्श? उस दृश्य की याद आते ही आज मेरे हृदय में न जाने क्या होने लगता है।

'ज्यार्जी! तुम तो किसी कवि या सन्त की-सी बातें कर रहे हो।'

'नहीं लीना! मैं तो एक मामूली लड़का हूँ।'

'लड़के हो?'—हँसते-हँसते लीना ने कहा।

'हाँ, लड़का ही रहना चाहता हूँ।'—इसके पश्चात् एक निःश्वास लेकर उसने कहा—'लीना! मुझे दुःख है, क्या सच-मुच ही मुझे कल अपना धर्म छोड़ना पड़ेगा? नहीं, नहीं, यह मुझसे न हो सकेगा।'

लीना कुछ न बोली।

'हलो डीयर ज्योर्जी ! क्या कर रहे हो ?'—सामने से आते हुए माइकेल ने पूछा।

'हलो, कम हीयर !'—ज्योर्जी ने स्वागत किया। वह भी इन दोनों के पास आकर बैठ गया। उनकी लम्बी-लम्बी काली परछाईं पीछे की कब्रों पर पड़ रही थीं।

'ज्योर्जी ! तुम बड़े लकी (भाग्यवान) हो। कम ऑन माई ब्वॉय। मुझे कान्ग्रेचुलेट करने दो।'

'कैसा कान्ग्रेचुलेट ?'—हाथ मिलाते हुए ज्योर्जी ने कहा।

'फस्ट प्राइज़ मिलने का और कल बेप्टाइज्ड होने का !'

'एं !'—धीरे से ज्योर्जी ने कहा।

'ज्योर्जी ! तुम्हें कल पता चलेगा कि जिस धर्म में तुम पदारोपण कर रहे हो, वह कितना उच्च है—तुम्हारे धर्म से, जिसमें तुम आज हो।'

'होगा।'—ज्योर्जी ने कहा।

'देखो लार्ड क्राइस्ट का जीवन'—वह फिर बोलने लगा—'समस्त संसार के प्रेम में—समस्त संसार के पापों को धो डालने के लिए—क्राइस्ट ने अपना जीवन न्योछावर कर दिया।...'

'तभी तो मैं क्राइस्ट को देव की तरह पूजता हूँ।'—ज्योर्जी बीच ही में बोल उठा।

'और तुम्हारा कृष्ण ? हजारों......'

'मेरा सिर दुख रहा है डीयर माइकेल, मैं होस्टल जाता हूँ'—ज्योर्जी फिर बीच में बोल उठा।

'अच्छा, जा रहे हो ! हम भी चलते हैं ।'

'नहीं, मैं चला जाऊँगा ।'

वह उठ खड़ा हुआ और चलने लगा ।

'लीना, मैं जा रहा हूँ ।'

'जा रहे हो ?'

'हाँ !'

'कहाँ जाओगे ?'

'शायद होस्टल ।'

'हम भी तो चलते हैं ।'

'नहीं, मैं अब नहीं बैठ सकूँगा । माफ करना ।'—कहते-कहते वह बाहर आगया । रास्ते पर चाँदनी छिटक रही थी । वृत्तों की काली-काली परछाईं रास्ते पर पड़ रही थी । वह चल दिया । सामने विशाल मैदान था—दूरी पर पर्वतों की श्रेणियाँ । मदमाती चाँदनी, अमृत बरसाती चाँदनी, अद्भुत भावों को उत्पन्न कर रही थी ?

वह चलता ही रहा । मैदान के बाद एक पुलिया आई । वह और आगे बढ़ा । एक विशाल सरोवर दिखाई दिया । सफेद और लाल कमल खिल रहे थे, वायु से लहराती जल-तरंगों में अनेकानेक चन्द्र और तारागण दिखाई दे रहे थे ! वह एक चट्टान पर बैठ जल में पड़ते चन्द्र के प्रतिबिंबों को देखता रहा ।

'क्या लीना उससे सच्चा प्रेम करती है ? आज गेदरिंग में जाते समय जब उसको चूम लिया था, तब उसके मुख पर कैसे भाव उत्पन्न हुए थे ? कितने प्रेम से उसने आलिङ्गित किया था ।

तो फिर वह माइकेल के साथ क्यों चली गई ? मेरे साथ क्यों न आई ? वह जानती तो थी कि मुझे आज न जाने क्या हो रहा है। नहीं-नहीं ! मेरा प्रेम स्वार्थी न होना चाहिए। मेरा धर्म तो उसे प्रेम ही करने का है। चाहे वह करे या न करे।'—विचार आते ही लीना की सुन्दर मूर्ति हँसती हुई उसके सामने खड़ी हो गई।

उसने हाथ ऊँचे कर उसे आलिंगन किया। सहसा विचार-माला भंग हुई। सामने कमलों में कोई श्वेत पत्नी चलता दिखाई दिया। वह सारस था। अपने पंखों को फैलाये इधर-उधर दौड़ रहा था। रानी जीजी की सफेद साड़ी याद आ गई और वह रोने लगा।

'माइकेल कितना मूर्ख है ?'—वह मन-ही-मन कहने लगा—'वह मेरे धर्म को असत्य बताता है। क्या शिव, राम और कृष्ण ईश्वर नहीं हैं ?'

विह्वल हो, उसने अपने दोनों हाथ ऊँचे कर दिये। देखा, सामने लार्ड क्राइस्ट की क्रूसीफाइड मूर्ति खड़ी है ; मानों वह उसे आश्वासन दे रहो है। कितनी दयालुता टपकती थी उस मुखमण्डल से। फिर चित्र उलट दिया।

'हलो ज्योर्जी ! क्या पागल हो गये हो ?'

'लीना, तुम ?'

'हाँ मैं ! तुम चले गये, तो मुझे अच्छा न लगा। मैं भी घूमने आ गई।'

'अच्छा किया लीना।'

'तुम क्या कर रहे थे ज्योर्जी ?'

'कुछ नहीं लीना, न जाने आज मुझे क्या हो गया है।'

'होस्टल चलते हो ?'

'चलो।'

नीलाकाश, चन्द्र और तारागणों को अपने अन्तर में छिपाती सरोवर की जल-तरंगों तथा खिले हुए कमलों को प्रणाम कर वह चल दिया।

रास्ते पर दोनों चुपचाप चलते रहे।

'ज्योर्जी! आज मुझे भी दुःख हो रहा है। मेरा हृदय भी आज जल रहा है। न जाने कैसी वेदना हो रही है।'—लीना ने शांति भंग की।

'किस लिए लीना ?'

'कह नहीं सकती।'

'कल की बात तो नहीं है ?'

'नहीं। उसकी मुझे कुछ भी चिंता नहीं है।'

'अच्छा !'

'ज्योर्जी...तुम...।'

'हाँ, क्या कहा लीना ?'

'कुछ नहीं।'—निःश्वास लेते हुए वह बोली।

'कुछ तो ?'

'कुछ नहीं।'

दोनों फिर चुप हो गये। होस्टल के पास आ गये।

ज्योर्जी लीना के साथ अपने रूम में चला आया।

'लीना! मुझे भी आज इस रूम में अच्छा नहीं लगता।'

'क्यों ज्योर्जी?'—ज्योर्जी के मुँह की ओर देखती हुई वह बोली।

'कह नहीं सकता, आज मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है।'

'ज्योर्जी! देखो यह चाँदनी तुम्हारी खाट पर कैसी अठखेलियाँ कर रही है। सामने की पहाड़ी चाँदनी में कैसी मनोहर लग रही है?'—ज्योर्जी को प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हुए लीना ने कहा।

दोनों खिड़की के पास खड़े हो गये। दोनों का शरीर एक-दूसरे से सटा हुआ था।

'ज्योर्जी! कैसी सुन्दर चाँदनी है? ईश्वर ने इसमें इतनी मादकता क्यों भर दी है?'

'लीना! क्या करोगी इसे जान कर। उसे देखकर खुश ही होना चाहिए; पर यह खुशी भी मन की स्थिति पर निर्भर है। इसे देख मुझे तो आज रोना आता है। यह रोना आनन्द का है या हृदय में दबे गहरे विषाद का—ईश्वर जाने लीना!'—उसका हाथ पकड़ कर उसे चाँदनी में देखते हुए वह बोला—'कौन इस विषाद को मिटा सकता है?'

'अच्छा, अब मैं जाती हूँ ज्योर्जी डीयर! देर हो रही है।'

'अच्छा लीना।'

'गुडनाइट'—करते हुए लीना ने अपना हाथ फिर से बढ़ाया।

'गुड नाइट माई लव'—कहते हुए ज्योर्जी ने शेक हेण्ड किया। दोनों के हाथ मिलाते ही एक बिजली-सी दौड़ गई। उसने लीना के मुँह की ओर देखते-देखते हाथ को दबा दिया। उसे प्रतीत हुआ, मानों वह कोई नये अनोखे प्रदेश में विचर रहा है, जहाँ अथाह शान्ति है—प्रेम है—आनन्द-ही-आनन्द है।

'लीना!'—मन्द स्वर से वह बोला।

लीना ने उसके मुख की ओर देखा। कितना प्रेम उन दो नेत्रों में था! आँखें चार हुईं। लीना ने मुँह नीचा कर लिया। ज्योर्जी ने उसे अपनी ओर खींच लिया। दोनों एक गाढ़ आलिंगन में बद्ध हो गये। ज्योर्जी ने उसके ओठों को चूम लिया। लीना ने उसके कन्धे से अपना सिर चिपटा लिया। दोनों कुछ क्षण वैसे ही चुपचाप एक स्वर्गीय सुख का अनुभव करते खड़े रह गये।

'ज्योर्जी!'—आलिंगन को शिथिल करती हुई धीरे से लीना बोली।

'ओह! माई लव!'

'अब मैं जाती हूँ।'

'लीना!...'

'देर हो रही है। अब मुझे जाना चाहिए।'

'लीना! इसकी स्मृति......'

लीना ने अपने गले में से माला निकाल ज्योर्जी के गले में पहना दी, और अपने हाथ उसके गले में डालकर रोने लगी।

'क्यों लीना ?'

'ज्योजी ! यह मेरी माता की अन्तिम भेंट है। तुम्हें देती हूँ। जब वह उस शहर की गली में मरी थी, तब उसने मुझे दी थी। इसे हमेशा अपने पास रखना।'

'और यह मेरी भेंट है।'—कहते हुए ज्योजी ने अपने गले में से एक माला निकाल कर उसके गले में डाल दी – 'यह मैं अपनी जीजी की भेंट तुम्हें दे रहा हूँ।'

वह अपने रूम की ओर चली गई। वहाँ माइकेल बैठा था। दोनों में बातें होने लगीं।

मुन्नू खाट पर लेट गया। खिड़की में से होकर चन्द्रप्रकाश उसकी खाट पर पड़ रहा था। खाट पर पड़ा-पड़ा वह विचार करता रहा। आँखें मुँद गईं। वह स्वप्न देखने लगा—सामने अपने गाँव की विशाल नदी है। एक महन्तजी की कुटिया से हारमोनियम के स्वर सुनाई दे रहे हैं—यह कौन ? रानी जीजी ?

बट का वृक्ष—वही बट का वृक्ष मैदान में खड़ा है। शाखाओं में से चाँद झाँक रहा है। झूले पर स्त्रियाँ झूल रही हैं ! वह कौन है ? रानी जीजी झूल रही हैं। सामने वह खड़ा है।

'मुन्नू यह क्या कर रहे हो ?'—झूलते हुए रानी जीजी ने पूछा।

'क्या जीजी ?'

'अपना धर्म छोड़ रहे हो ?'

......एक खाट है—घर के आँगन में। चाँद ऊपर से

झाँक रहा है—खाट पर एक रोगी है। कितना म्लान मुख है रोगी का ? कौन है यह ? रानी जीजी ? वह घबड़ा गया। इतना म्लान मुख ! आँखों में से अश्रु टपक रहे हैं !

यह क्या ?

'जीजी !'

'मुन्नू !'

'जीजी, तुम्हें क्या हो गया है ?'

'मैं जाती हूँ।'

'जीजी, मैं न जाने दूँगा।'

'अच्छा, मेरी बात मानोगे ?'

'अवश्य जीजी ! तुम्हारे लिए मेरी जान तक......'

'मुन्नू तुम ईशु भगवान् को पूजते हो ; उन पर प्रेम रखते हो, इससे मैं प्रसन्न हूँ ! पर, तुम अपना धर्म छोड़े बिना भी उनकी आराधना कर सकते हो। अपना धर्म मत छोड़ो ! देखो मेरी बात को न भूलना......प्यारे भै......'

जीजी ! जीजी ! मैं प्रण करता हूँ ! तुम चिंता मत करो।'—मुन्नू घबरा गया।

विशाल समुद्र का किनारा है। मनुष्यों की भीड़ लगी है। यह सब क्या है ? ईशु भगवान् को क्रॉस में जड़ा जा रहा है। कितना हृदय-द्रावक दृश्य है ?

......रानी जीजी मूर्ति के पास खड़ी हैं। हाथ में रुद्राक्ष

की माला है। म्लान चेहरा है; सफेद खादी की साड़ी में रक्त के धब्बे हैं। बाल बिखरे हुए गालों पर पड़े हैं। रानी हाथ जोड़े खड़ी है। ईशु भगवान् के मुख पर अनुपम प्रेम और शान्ति झलक रही है। वह भी खड़ा है। सागर लहरें ले रहा है। भगवान् शंकर और पार्वतीजी आते हैं? अहा, कैसा सुन्दर दृश्य है! यह क्या? सब बातें कर रहे हैं? कितना प्रेम है, दोनों में! भगवान् ईशु और महादेवजी में। दोनों एक दूसरे को भेंट रहे हैं......।

'जाओ प्यारे।'—भगवान् ईशु बोले।—'मुन्नू उनके पैरों में गिर गया।'

सहसा मुन्नू की नींद टूटी। वह क्या देख रहा था? घबड़ा गया। क्या यह स्वप्न था? क्या जीजी के ऊपर कोई आपत्ति आई है? वह क्या करे, कहाँ जाय? फिर महादेवजी का और लॉर्ड क्राइस्ट का भेंट करना याद आया। हाँ, आदेश मिल गया। जीजी के आदेश का पालने के लिए उसे इस जगह से दूर भाग जाना चाहिए। वह उन्मत्त सा हो गया।

रात-हो-रात भाग जाना उसने निश्चित कर लिया। दूर—वह इस जगह से दूर चला जायगा, जिस प्रकार एक दिन वह रानी जीजी के पास से—अपने माता पिता के पास से—भाग निकला था। फिर न कोई उसे जानेगा, न कोई पूछेगा। इस विशाल जगत् में वह अकेला ही भटका करेगा। बस प्रणाम, क्राइस्ट-पुर प्रणाम!

आवेश में आकर उसने अपनी कमीज़ फाड़ डाली। एक

फटा-सा कुरता और एक पुरानी निकर निकाल कर पहन ली। अपने रूम को छोड़कर वह गेलेरी में आ खड़ा हुआ। रात्रि शांत थी? सर्वत्र शांति फैली हुई थी। इसी गेलरी में उसने बहुत समय बिताया था—अनेक मनोहर दृश्य देखे थे।

जीजी के आदेश पर, भगवान् ईशु की अनुमति पर, आज उसे यह सब छोड़ना पड़ेगा। उस जीजी के आदेश पर कि जिसके निर्मल प्रेम ने उसे आज तक जीवित रक्खा है।

वह नीचे आ गया। उसे अपनी प्रियतमे, प्रेम की मूर्ति, आनन्ददायिनी लीना की याद आ गई।

वह लीना के रूम की तरफ चल दिया। जाकर सीढ़ियां पर खड़ा हो गया। क्या वह लीना से भेंट करे? वह सो रही होगी। उसकी निद्रा भंग हो जायगी। कोई देख लेगा, तो प्रिन्सिपल से शिकायत कर देगा। कुछ खटका हुआ। स्तब्ध-सा खड़ा रह गया। लौटने लगा। नहीं, लीना से मिलना उचित नहीं। उसके प्रेम ने यदि उसे रोक लिया तब? तब रानी जीजी के आदेश को वह कैसे पाल सकेगा? वह स्कूल-कंपाउण्ड के फाटक के पास आ गया। एक कुत्ता उसके सामने से जीभ लपलपाता भागता निकल गया।

उसे लीना से मिलना तो अवश्य चाहिए। वह क्या सोचेगी? कितनी दुखित होगी? आज रात्रि को उसने उससे कितना प्यार किया? अपना सर्वस्व दे देने को तैयार हो गई। अहा! वह कितना प्रेम करती है? क्या उससे बिना मिले ही वह चला जाय? रात्रि का दृश्य सामने नाचने लगा। अपने कन्धे पर बिखरे हुए

[illegible]ल और उसका प्रेममय मुख-मंडल मानों उसे प्रेम के—आनंद के—स्रोत में नहला रहा है।

वह फिर लौट आया। लीना के रूम के पास खड़ा हो गया। खिड़की में से लीना को देखने लगा। लीना टेबल पर [illegible] कर कुछ लिख रही है। [illegible]र यह कौन. माइकेल? माइकेल दूसरी कुरसी पर बैठा कुछ [illegible]खवा रहा है।

'यू आर ए नाट[illegible]र्ल!'—माइकेल बोल उठा।

मुन्नू फिर लौट प[illegible]ा। फाटक के बाहर आ गया। नहीं, वह अब लीना से न मिलेगा। माइकेल वहाँ है। सब [illegible]न जायगा। आशंका होने लगी। किसी प्रकार उसका शमन किया।

चांदनी रात में उसका स्कूल कितना सुन्दर दिखाई देता है! वह उसे प्रणाम करता हुआ चल दिया। चर्च की मीनारें दिखाई दीं। ग्रेव यार्ड के वृक्ष, लताएँ और सरोवर कैसे शून्य और भयानक दिखाई दे रहे हैं? उन्हें छोड़ कर वह चला जा रहा है। मुझे माफ करना—गिरजाघर की ओर हाथ ऊँचे करके वह बोल उठा।

फादर का बँगला आया, उसे भी हाथ जोड़े। आगे, वही मैदान और शफाखाना दिखाई दिया, जहाँ वह पहले पहल आया था। आज वह फिर अनभिज्ञ जगत् में जा रहा है; पर आज उसमें आत्म-प्रेरणा है—आत्म-शक्ति है।

'वह आगे बढ़ा। सड़क साफ थी। दोनों ओर नीम और पीपल के वृक्ष खड़े थे। वह चलता ही रहा। जब खूब दूर निकल

आया, तब वह खड़ा होगया और दूरी पर सो रहे क्राइस्टपुर की ओर देखकर बोलने लगा—क्राइस्टपुर ! तुझे आज छोड़े जा रहा हूँ, लाचार हूँ। मैं तुझे नहीं भूल सकता ; पर मैं अपना धर्म भी नहीं छोड़ सकता। मेरे हृदय पर तेरा चित्र सदा के लिए अंकित रहेगा। मैं तेरी सेवा और प्रेम का बदला नहीं चुका सकता।'

रास्ते की उस धूल में दो बूँद आँसू टपक पड़े।

आगे चाँदनी में चमकती वही सड़क दीख रही थी।

१८

मुन्नू अब निरा बालक नहीं है। वह एक युवक है, जो अपनी आत्म-प्रेरणा से सुख, शान्ति और वैभव को तिलांजलि देकर अनजान स्थान में भटक रहा है—एक अनजान विश्व में भाग निकला है, जहाँ उसे अपार दुःखों को सहते हुए पदारोपण करना पड़ेगा ; पर अब उसके हृदय में भय नहीं है—डर नहीं है। उसमें आत्म-विश्वास है, आत्म-प्रेरणा और है दुःख सहन करने की शक्ति। उसने अब दृढ़ निश्चय कर लिया है कि वह अनेक कष्टों को सह लेगा ; पर अपने धर्म से विचलित न होगा।

क्राइस्टपुर से १५ मील की दूरी पर वही शहर बसा हुआ है, जहाँ पर गार्ड ने उसे उतार दिया था और जहाँ से क्राइस्ट-सेवा-लीग के स्वयंसेवक उसे उठा ले गये थे।

भटकता हुआ वह वहाँ पहुच गया। थका हुआ था। क्राइ-

रटपुर और लीना की याद भी आ रही थी। उसको अपने ज्योर्जी नाम से घृणा होने लगी। फिर उसने अपना नाम मुन्नू रख लिया। इससे अच्छा नाम रखने का भी विचार किया ; पर इस नाम से कुछ मोह-सा हो गया था। जो नाम उसके बाबूजी और माताजी ने रखा था, वही नाम उसे रखना चाहिए—दूसरा कैसे रख लेगा।

अब विकट प्रश्न सामने खड़ा था—उसे पेट भरने के लिए क्या करना चाहिए ? शहर के बाहर एक अमराई में बैठा वह विचार करने लगा। भूख लग रही थी। लेकिन, अब उसे क्या करना चाहिए ? निश्चय किया, इस शहर में कोई आर्ट्स स्कूल हो, तो उसमें भरती हो जाय और अपनी कला में पूर्णतया दक्षता प्राप्त करे। यही निश्चय उसने कर लिया। मन-ही-मन प्रसन्न हो वह एक गाना गुनगुनाने लगा। हाँ, जब पास कर लेगा, तब कहीं मास्टर बन जायगा, और फिर जीजी से, शैल से और बाबूजी से, सबसे मिलने जायगा।

कुछ विश्राम कर वह शहर की ओर चल दिया। प्रातःकाल के नौ-दस बजे होंगे। बड़ा भारी शहर था। मोटरें इधर से उधर दौड़ रही थीं। रास्ते के दोनों ओर दूकानों की कतारें थीं। वह एक दूकान पर चला गया। एक सेठजी के निकट जाकर, कुछ सकुचाते हुए कहा—सेठ साहब, कुछ सहायता कीजिएगा ?

'कशी शहायता ?'—सेठजी अपनी पगड़ी सँभालते हुए बोले।

'मैं विद्यार्थी हूँ। कुछ भोजन......

'चाल आगे, घणा विद्यार्थी म्हांरे कणे आवे है।'

मुन्नू वहाँ से निराश होकर चल दिया। एक खोंचे वाला, बाग के सामने खड़ा हो, अँगोछे से अपने हाथ पोंछ रहा था। वह उसी के पास खड़ा हो गया। सामने के पार्क में से पुष्पों की भीनी-भीनी सुगन्ध आ रही थी।

'क्यों भाई स्कूल ऑफ आर्ट्स यही है क्या?'

'जी नहीं है।'

'बताने की कृपा कीजिएगा?'

'क्यों नहीं, चलिए।'—एक दोने में एक लड़के को दहीबड़े देता हुआ वह बोला।

दोनों चल दिये। थोड़ी दूरी पर एक कंपाउण्ड के भीतर एक भव्य इमारत खड़ी थी। कंपाउण्ड में एक छोटा-सा बाग भी था।

'बाबूजी, यही आरट कालिज है।'

'अच्छा, कष्ट के लिए माफ करना भाई।'

'वाह बाबूजी, माफी की कौन बात है इसमें। आप कहाँ से आये हैं?'

'मैं बड़ी दूर से आया हूँ।'

'यहाँ पर आपका कोई नहीं क्या?'

'नहीं।'

'भोजन-वोजन पाया?'

'नहीं।'

'तब आइए बाबूजी, जरा कुछ खा लीजिए।'—खोंचे वाले ने एक दोने में दहीबड़े निकालते हुए कहा।

प्रश्न किया—तुम कौन हो ?

'एक नया विद्यार्थी हूँ साहब ।'

'इस तरह क्यों आये ?'—प्रिन्सिपल ने क्रोध से कहा ।

मुन्नू कुछ न बोला ।

'क्या बात है, क्यों खड़े हो ?'

मुन्नू को न जाने रोमांच-सा हो आया—उसके मुख पर ताला पड़ गया ।

'बाहर जाओ ।'

वह अपने भाग्य को कोसता हुआ, बाहर निकल आया। उसके दयनीय मुख को देखकर प्रिन्सिपल ने पुकारा—ऐ लड़के, इधर आओ । वह भीतर चला गया । मुन्नू ने देखा—प्रिन्सिपल के मुख पर दया के स्पष्ट चिह्न झलक रहे थे ।

'तुम कहाँ से आये हो, यहाँ कैसे चले आये ?'

'साहब, मैं आज ही इस शहर में आया हूँ ।'—अपने बल को एकत्र करके वह बोला—'यहाँ मेरा कोई नहीं है, मैं अनाथ हूँ ।'

'अच्छा, तो क्या चाहते हो ?'

'मैं पढ़ना चाहता हूँ, इस स्कूल में ।'

'तुम्हें कुछ आता भी है ?'

'जी हाँ ।'

'अच्छा, कल तुम्हारी परीक्षा होगी । जाओ कल आना ।'

'अच्छा साहब माफ कीजिएगा ।'—कहता हुआ मुन्नू बाहर चला आया । ईश्वर को धन्यवाद दिया ।

दो-चार लड़के पानी पीने की छुट्टी ले नीचे उतर रहे थे। मुन्नू को देखकर हँसने लगे। उसका मजाक उड़ाने लगे।

'आदाब अर्ज जनाब!'—एक कंजी आँख वाला लड़का बोला।

मुन्नू ने हाथ जोड़ लिये।

'बुद्ध शंकर की जय ?'—दूसरे ने उछलते हुए कहा।

मुन्नू को जरा बुरा मालूम हुआ; पर वह नीचे उतर कर रास्ते पर हो लिया। अब उसके सामने प्रश्न था—वह स्कूल में तो भरती हो जायगा; पर भोजन का क्या प्रबन्ध होगा ?

दिन भर वह शहर में भटकता रहा। किसी से उसको कोई सहायता न मिली। शाम को वह शहर के बाहर नदी की चमकती हुई रेती में चिन्ता-ग्रस्त बैठा था। सामने ही नदी की रेती में बालक गण खेल रहे थे। कुछ दूर, नदी में सन्ध्या का प्रतिविम्ब पड़ रहा था। अब वह क्या करे ?

सूर्य के डूबते ही वह उठ खड़ा हुआ और रेती में चलने लगा। थोड़ी दूरी पर एक विशाल बगीचा देखा। बीच में एक बँगला बना था। फाटक खोल कर वह बगीचे में घुस गया। सामने एक कुँआ था। जगत् पर धोती सूख रही थी।

उसे ननकू की दी हुई रोटी और उसके कुएँ की जगत पर सूखती धोती की याद आ गई। एक आम के नीचे बैल घास खा रहे थे। बगीचा नई और पुरानी पसन्द का मिश्रण था, बँगला भी इसी प्रकार का था। केला, नीबू और असरूद के वृक्ष भी कहीं-कहीं खड़े थे।

एक बेंच पर मारवाड़ी पगड़ी सिर पर रखे एक सेठजी बैठे

थे। मुन्नू जरा आगे बढ़कर उनके पास पहुँचा। साहस करके उसने कहा—सेठ साहब !—इसके आगे वह कुछ न कह सका।

'क्या है ?'

'मैं एक अनाथ हूँ।'—बड़ी मुश्किल से उसने कहा।

'तो क्या है ?'

'मेरी सहायता कीजिए, मुझे कुछ काम दीजिए।'

'कैसी सहायता ?'

'आप मुझे दोनों समय खाने को भोजन दे दिया कीजिए—और मुझसे जो चाहे काम लीजिए।'

'हमको नौकर की जरूरत नहीं है।'

'राख लो बिचारा ने'—सेठानीजी सामने की कुरसी पर बैठती हुई बोलीं। सेठानीजी पर कुछ नया प्रकाश पड़ चुका था। कुछ पढ़ना भी सीख गई थीं।

'हाँ, गंगा,...पर अभी...।'

'कोई बात नी, ईने राख लो।'

'अच्छा।'

'साहब !...'—मुन्नू बीच में बोल उठा।

'हाँ, क्या कहा ?'

'मैं विद्यार्थी हूँ।'

'लो, पढ़ना भी है, और काम भी करणा है !'

'पढ़ने के बाद काम करूँगा—जो कुछ भी आप कहेंगे।'

'राखलोजी, पड्यो रेगा। कोई हरज है।'

'अच्छा, अच्छा, अरे रंग्या इधर आइयो।'

'आया साहब!'—कहकर एक बूढ़ा ब्राह्मण भीतर से हाथ जोड़ता हुआ आ गया।

'अरे कल से यह छोरा चरस चलायगा और बाग़ को पानी सींचेगा। रामा को कल से मील में भेज दो और ये यहीं रोटी खायगा।'

'अच्छा सरकार!'—कहता, खाँसता हुआ वह भीतर बँगले में चला गया।

रात्रि को कुएँ के पास आम के नीचे बेंच पर उसे सोने को कह दिया गया। आकाश में चाँद खिल रहा था। घर के जूठे बरतन साफ़ करके मुन्नू बाग़ का फाटक खोल बाहर आ गया। चाँदनी में सामने नदी की रेती चमचम चमक रही है और कुछ दूर सर्पाकार श्वेत नदी बहती चली जा रही है। सामने के किनारे पर खड़े बँगलों में बिजली की बत्तियाँ जल रही हैं।

दो दिन पहले वह कहाँ था और आज कहाँ आ गया है? जीजी के आदेश का पालन करने के लिए वह यहाँ भाग आया है। बड़ी दूर से—अपनी प्रियतमा के पास से। वह क्या कर रही होगी? क्या वह उससे सच्चा प्रेम करती है? माइकेल और उसमें क्या सम्बन्ध है? वह इसी प्रकार के अनेक विचार करता रहा। कुछ देर बाद वह फाटक बन्द कर बाग़ में आ गया और उस कुएँ के पास आम के नीचे पड़ी बेंच पर, अपने रूम, होस्टल और लीना का विचार करता हुआ सो गया।

घर की राह

मुन्नू आर्ट्स स्कूल में भरती हो गया है। सब कष्ट सहने का उसने दृढ़ निश्चय कर लिया है। सेठजी ने देखा कि एक लड़का मुफ्त में काम करने को मिल गया है, तो वे उस पर काम का बोझा दिन-दिन बढ़ाते ही गये। ११ से ४ बजे तक वह स्कूल में रहता। स्कूल से आते ही उसे चरसे से सारे बगीचे को पानी सींचना पड़ता। बहुत रात गये तक वह इस काम में जुटा रहता। ऐसा काम उसे कभी न करना पड़ा था। रस्से पर बैठ-कर, रस्से को खींचने तथा रस्से पर हाथ रख चरसा चलाने से उसके हाथ में छाले पड़ गये थे। हाथ में तीव्र वेदना होती थी; पर वह सब कुछ सहन करता था।

सेठजी और सेठानीजी मुन्नू से कभी नाराज़ तो न होते; पर नाराज़ हुए बिना ही घर का तमाम काम उससे करवा लेते। शाम को आते ही चरसा चलाना पड़ता। फिर चौका लगा, घर के बरतन मलने पड़ते। फिर माँजी के पैर दाबने पड़ते—बहुत रात तक। प्रातःकाल जल्दी उठकर घर को झाड़-बुहार कर, छोटी बच्ची यमुना को गोद में ले, उसे बाग में टहलाना पड़ता। स्कूल के टाइम के सिवा उसे एक मिनट की भी फ़ुरसत न मिलती। स्कूल में ही वह अपना ड्राइंग का काम करता। घर पर कभी टाइम मिल जाता, तो दीवार पर चित्र बनाया करता। कभी-कभी सेठजी उससे चिढ़ जाते कि वह क्यों बँगले की दीवारें खराब किया करता है।

१९

एक दिन मुन्नू स्कूल से छुट्टी पाने के बाद देर से घर पहुँचा। स्कूल की तरफ से आज विद्यार्थी सिनेमा देखने गये थे। सबके साथ मुन्नू भी चला गया था। वह शाम को ६॥ बजे घर पहुँचा।

'कहाँ मर गया था !'—उसके आते ही सेठजी बरस पड़े।

'साहब, स्कूल की तरफ से आज सिनेमा······।'

'तो सिनेमा देखना है कि नौकरी करना है ? मन भर तो अनाज चाट जाता है, और काम से जी चुराता है !'

'साहब, कसूर होगया। अब......!'

'बगीचे को अब कौन पानी सींचेगा—तेरा नाना ?'

'चाँदनी रात है सेठजी, रात को सींच दूँगा।'

'बड़ा रात को सींचने वाला आया है! बरतन कौन माँजेगा ?'

'सब कर लूँगा, सेठ साहब।'

'बस, बक-बक मत कर, गधा कहीं का!'

इतने कटुवचन! इतना कार्य करने पर भी? वह कितना कष्ट सह रहा है? फिर भी कोई उससे प्रेम के दो शब्द नहीं बोलता। ओह गुलामी, तेरा नाश हो!

'जा, यमुना को लेआ।'

मुन्नू भीतर चला गया। यमुना एक खाट पर लेटी थी। उसे गोद में उठा, वह बाहर चल दिया। बाहर आते ही, एक पत्थर की ठोकर लगी और वह यमुना के साथ ही नीचे गिर पड़ा। यमुना रोने लगी।

'आँखें फूट गई हैं क्या? ससुरा कहीं का! चल निकल मेरे घर से! मुझे तेरी जरूरत नहीं है।'

सेठजी ने क्रोधावेश में मुन्नू के जोर से एक चपत जड़ दी।

उसका स्वात्माभिमान जाग उठा। नेत्रों से क्रोध के अश्रु बहने लगे। वह बाहर चला आया। अब क्या करे? कैसे बदला ले? आग लगा दे सारे बाग में?

वह नदी की रेती में टहलने लगा। ओह कैसे दुर्विचार! नहीं, उससे यह न होगा, उसे सभी दुःख और अपमान सहने होंगे।

मुन्नू रेती में खड़ा-खड़ा नदी की ओर देखता रहा। भूतकाल उसके सामने खड़ा हो गया। आज छः मास से वह इसी मकान में रहता है। इसी मकान में उसे आश्रय मिला है। पहले उसकी स्थिति क्या थी? आज क्या है? परन्तु गाली की याद

कर उसका आत्माभिमान जाग उठा। वह यहाँ रहकर इतना काम करता है, सेवा करता है ; और फिर भी उसका इतना अपमान ? इससे तो वह क्राइस्टपुर में ही सुखी था। वहाँ सुख था, शान्ति थी और प्रेम था। यहाँ न सुख है, न शान्ति है, न प्रेम। कितना अन्तर है ? क्या यहाँ आकर उसने अच्छा किया ?

सामने नदी में, चाँदनी में, एक युवती श्वेत साड़ी पहने, घड़े में पानी भर रही थी। उसे देख, रानी जीजी की याद आ गई। उस दिन का स्वप्न याद आ गया, जिसने उसे क्राइस्टपुर छोड़ने का, वहाँ से भाग निकलने को प्रेरित किया था—साहस दिया था। आज उसकी हिम्मत टूटी जा रही थी। वह क्या करे ? क्राइस्टपुर लौट जाय ? उसके हृदय में तुमुल युद्ध मच गया।

वह नदी के किनारे आ गया। एक चट्टान पर बैठ गया। नदी में पड़ते अपने प्रतिबिम्ब को देखता रहा।

कितना मूर्ख है वह ? इतने से दुःख में वह अपनी हिम्मत छोड़ बैठा—इतना बलहीन हो गया ? अपने उच्च आदर्शों को भंग कर रहा है ? उसे ऐसे विचार ही क्यों आये ? यह कितनी दुर्बलता है ? रानी जीजी की मूर्ति मानो उसकी अवहेलना करने लगी। ओह ! वे कितनी पवित्र, भोली और धैर्यवान् हैं ? और वह कितना अपवित्र, कपटी और धैर्य-हीन है ?

वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा—हे भगवान् ! मेरे ऐसे विचारों को नष्ट कर दो। रानी जीजी ! मुझे शक्ति दो।

आँख खोलकर देखा, मानों सामने ही लीना खड़ी है।

कितनी प्रेममयी मूर्ति है ? लीना, प्यारी लीना ! मुझे बचाओ।

वह खड़ा हो गया। वेग से बगीचे का फाटक खोल भीतर घुस पड़ा। शोक हलका पड़ गया था। वह बँगले में गया। सेठजी भोजन कर रहे थे।

'सेठ साहब ! मुझे माफ़ कीजिएगा, मैं जा रहा हूँ।

'कहाँ ?'

'जहाँ ईश्वर ले जाय !'

'क्यों ?'

'क्योंकि आप रखना नहीं चाहते—मैं अब अपमान को नहीं सह सकता।'

'अच्छी बात है, तुम्हारी खुशी।'

सबको प्रणाम कर, मुन्नू बाहर आया। अब वह कहाँ जाय ? अपनी पढ़ाई के अन्तिम दो वर्षों को पूरा करे या नहीं ? या वह इस शहर से भी और कहीं चला जाय ?

सब विचारों को छोड़ वह नदी की रेती में चलने लगा। आज उसे चाँदनी रात में नदी का झलमल जल या चमचम बालू में जरा भी आनन्द नहीं आ रहा था। एक समय था, जब क्राइस्ट-पुर में ऐसी चाँदनी को देख उसका हृदय भावों से उमड़ आता, और वह आनन्द से पागल हो उठता था ; पर आज ?

'ओहो, बाबूजी ! बड़े दिनों में दरसन हुए ?'—खोंचेवाले न मुन्नू को देखते ही कहा।

'अच्छा, तुम हो ?'

'हाँ बाबूजी !'

'बहुत दिनों बाद दिखे ?'

'हाँ बाबू ! ससुराल चला गया था ।'

'क्यों ?'

'सास मर गई थी, उसी का कारज था ।'

'अच्छा ।'

'बाबू, आज उदास कैसे दिखते हो ?'

'कुछ नहीं, योंही ।

'नहीं, नहीं, कुछ तो ?'

'रहने की कोई जगह नहीं है । जहाँ रहता था, उन्होंने अलग कर दिया ।'

'अपने घर चलो बाबूजी ।'

'नहीं भाई, तुम्हारी इतनी दया ही बहुत है ।'

'नहीं बाबूजी, आपही का तो वह घर है ।'

'आज तुम इधर कैसे चले आये ?'

'आज गाँधी आसरम की सभा है । वहीं पर खोंचा लेकर जा रहा हूँ ।'

'अच्छा ।'

'चलते हो वहाँ ?'

'चलो ।'

दोनों चल दिये । थोड़ी दूरी पर एक विशाल पुल दीखा, जिस पर मोटर, लारियाँ और टाँगे दौड़ रहे थे । लोहे की बड़ी

रेलिंग्स, जो पुल के दोनों ओर खड़ी थीं, उनमें से मनुष्यों की भीड़ आती-जाती दीख रही थी।

पुल के नीचे वे चलते रहे।—'महात्मा गाँधीजी की जय! जवाहरलाल की जय! भारत-कोकिला की जय! वन्दे मातरम्!' के गगन-भेदी शब्द मुन्नू के कानों पर पड़े।

'यह क्या हो रहा है?'—मुन्नू ने खोंचेवाले से पूछा।

'सभा के आदमी जय-जयकार कर रहे हैं।'

'कैसी सभा है?'

'गाँधी आसरम वालों ने बुलाई है।'

मुन्नू चुपचाप चलता रहा। देखा नदी के किनारे रेती पर असंख्य मनुष्यों की भीड़ लगी हुई है। सफेद टोपियों का मानों समुद्र लहरा रहा है। चाँदनी में वह समुद्र कितना सुन्दर दिखाई दे रहा है! मध्य में एक ऊँचे मंच पर १५-२० कुरसियों पर श्वेत वस्त्र-धारी स्त्री और पुरुष बैठे हुए हैं।

मुन्नू दूर ही खड़ा रहा। आज इतनी भीड़ यहाँ क्यों है? यह सब क्यों इकट्ठे हुए हैं?—मुन्नू सोचने लगा।

एक युवक मंच पर खड़ा हो गया। उसके खड़े होते ही जनता ने फिर से जय-जयकार का नाद किया। युवक ने हाथ ऊँचा करके जनता से शांत रहने की प्रार्थना की—और कहने लगा—

'माननीय उपस्थित बन्धुओ,

जानते हो, आज तुम सब यहाँ पर—इस परम पुनीत सरिता के विशाल तट पर—क्यों एकत्र हुए हो? इस सभा का क्या उद्देश्य है?

भाइयो, मैं तुम्हें आज परम पूज्य बापूजी का संदेश सुनाने आया हूँ। बापूजी का आदेश है कि तुम इस अछूतपन के राक्षस का विध्वंस कर डालो। भारतमाता की दशा को देखो। जो भारतवर्ष समृद्धिशाली देश था—जो भारतवर्ष संस्कृति के उच्चतम शिखर पर विराजमान था—जो भारतवर्ष धर्म, नीति और दया का धाम था और जिस भारतवर्ष में अनाथ और असहायों के भरण-पोषण करने की शक्ति थी, आज उसी भारतवर्ष की कैसी दुर्दशा हो रही है ? आज भारतदेश कितना निर्धन और अनाथ-सा हो गया है ? रिद्धि-सिद्धि नष्ट होती चली जा रही है और आज इसके असंख्य अनाथ बालक गली-गली भीख माँगते फिर रहे हैं।

इसका कारण ? कुछ भी नहीं, हमारे पापों का—हमारे अत्याचारों का—फल है; क्योंकि हमने अपने एक अंग को, अपने कहे जाने वाले अछूत भाइयों को, सताया है, उन पर अत्याचार किया है, उन्हें अछूत, चाण्डाल कह कर अपने समाज से अलग कर दिया है। उन्हीं के श्राप से हमारी यह दुर्दशा हो रही है।

मेरे प्यारे भ्राताओ ! तुम नहीं जानते कि इस अछूतपन ने हमको कितनी हानि पहुँचाई है। आज हमारे पाँच करोड़ भाई इस अछूतपन की चक्की में पिसे जा रहे हैं। इसी के कारण आज हमारे अनेक अछूत भाई अपना धर्म छोड़ चुके हैं।

यदि हम सच्चे आर्य हैं, आर्य-सन्तान कहलाने का दावा रखते हैं—यदि आज भी हमारी नसों में पुरातन आर्यों का रक्त

बहता है, तो उन ऋग्वेद कालीन आर्यों की भाँति अपना हृदय निर्मल और शुद्ध रखना होगा, इस अछूतपन को मिटाकर हरिजन भाइयों को गले लगाना होगा। उन्हें उच्च शिक्षा देनी होगी, उन्हें मंदिरों में प्रवेश कराना होगा, उन्हें सच्चे आर्य-धर्म का उपदेश करना होगा।

यदि ऐसा न होगा, तो याद रखो, हिन्दू जाति का विध्वंस हो जायगा। हिन्दू जाति का नामोनिशान इस संसार से मिट जायगा!

अधिक क्या कहूँ, यही पूज्य बापूजी का संदेश है, आदेश है। उन्होंने तो इस अछूतपन को मिटाने के लिए अपना जीवन तक न्योछावर करने की ठान ली है। बस अधिक समय न लूँगा।'

युवक के बैठते ही करतल ध्वनि ने वृक्षों पर बैठे हुए पक्षियों को चौंका दिया। चारों ओर से वृक्षों पर बैठे मोर, कौए और अन्य पक्षी बोल उठे।

युवक के बाद एक युवती उठीं। उन्होंने भी गरजते हुए व्याख्यान दिया। जब कार्यक्रम समाप्त हुआ, तब युवक उठा और कहने लगा—

'बहनो और भाइयो,

सभा विसर्जित होने के पहले प्रार्थना का भजन गाया जायगा, आशा है सब एक स्वर में रघुपति राघव राजा राम गाने की कृपा करेंगे।'

एक दूसरे युवक ने हारमोनियम टेबल पर रखकर मन्द मधुर स्वर से 'रघुपति राघव राजा राम। पतित पावन सीता राम।'

की धुन छेड़ दी। सब लोग एक साथ गा उठे। एक अनोखा समा बँध गया। मुन्नू ने नेत्र मूँद लिये। वह भी जनता के साथ-साथ 'रघुपति राघव राजा राम' गाने लगा। उसका हृदय आनन्द से भर गया। मानों वह कोई स्वर्गीय सुख का अनुभव कर रहा हो। प्यारे रामचंद्रजी की मूर्ति, मूर्च्छित लक्ष्मण को गोद में लिये अश्रु वहन करती उसके सामने खड़ी हो गई। कितना भाव-पूर्ण मुख? कितनी देदीप्यमान कान्ति? उस शांत ज्योत्स्नामय वातावरण में, एक साथ दस हजार मनुष्यों के उच्च स्वर रघुपति रामचन्द्र का नाम लेते हुए कितना आनन्द दे रहे थे? कितना सुख, शांति और आनन्द उत्पन्न कर रहे थे?

एकाएक जयजयकार की कर्ण-भेदी आवाज़ ने उसे जगा दिया। जनता उठ खड़ी हुई। सब अपने-अपने घर जाने लगे।

हाँ, वह भी अछूत है, उसका भी आज उद्धार होगा—उसके मन में कोई कहने लगा। सब शोक-पूर्ण भावनाएँ न जाने कहाँ जाती रहीं। विचार हुआ—वह उस युवक के पास जाकर अपना सब वृत्तान्त कह डाले। वह रंग-मंच के पास चला गया। धीरे-धीरे सब लोग जा रहे थे। मंच के पास पन्द्रह-बीस युवतियाँ और युवक बातें कर रहे थे। जिस युवक ने लेक्चर दिया था, वह एक युवती से कुछ वार्त्तालाप कर रहा था। वन्देमातरम् कह कर सब जाने लगे।

वह युवक और युवती भी सबसे अभिवादन कर चलने लगे। मुन्नू उनके पीछे हो लिया। वे दोनों कुछ दूर जाकर

नदी के तट पर रेती में बैठ गये। मुन्नू पास ही खड़ा हो गया। उनकी दृष्टि मुन्नू पर पड़ी।

'क्यों भाई, कोई काम है?'—युवती ने मृदु स्वर में पूछा।

'एक निवेदन है।'—मुन्नू हाथ जोड़ता हुआ बोला।

'क्या है भाई?' युवक ने खादी की टोपी सिर से उतार कर नीचे रखते हुए पूछा।

'जी, मैं अछूत हूँ। असहाय भटकता फिर रहा हूँ। कोई नहीं सुनता। बड़ी दया होगी, अगर आप कुछ सहायता करेंगे।'

'अच्छा आओ, बैठो।'

मुन्नू उनके पास बैठ गया।

'तुम तो पढ़े-लिखे दिखाई देते हो'—युवती ने मुस्कराते हुए कहा।

कितनी सुन्दर युवती है? खादी की सफ़ेद साड़ी उसके गौर-वर्ण शरीर पर कितनी सुन्दर लग रही है? उसकी बातों से कैसा अमृत झर रहा है।

'जी,'—कहकर मुन्नू ने अपना सारा वृत्तांत कह सुनाया।

'बड़ा अच्छा हुआ, तुमने सब कह सुनाया। नहीं तो, न जाने क्या दशा होती?'—युवती ने सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा।

'चलो, हमारे यहाँ रहना।'—युवक ने कहा।

'आपका परिचय? क्षमा कीजिएगा।'—मुन्नू ने सकुचाते हुए कहा।

'सामने जो आश्रम है, उसे गांधी-आश्रम कहते हैं—मैं ही

आजकल उसका स्थानापन्न संचालक हूँ। संचालक महाशय कार्य-वश बाहर गये हुए हैं? मैं डॉक्टर भी हूँ। मेरा नाम विमलचन्द्र है।'

'मेरे बाबूजी...भी डाक्टर हैं।'

'अच्छा,बड़ी खुशी की बात है!'—युवती ने हाथ का तकिया लगाकर रेती में लेटते हुए कहा।

'चलो शन्नो, अब चलेंगे।'

'चलिए।'

तीनों चल दिये। आश्रम में जाकर, वहाँ की देख-भाल करके, वे पक्की सड़क पर आ गये। कुछ दूरी पर एक बँगला खड़ा था, उसी में उन्होंने प्रवेश किया।

'यह हमारा बँगला है।'—युवक ने कहा।

'अब तुम्हें यहीं पर हमारे भाई की तरह रहना होगा'—शान्ति देवी ने कहा।

'तुम्हारे भाई की तरह कि मेरे?'—युवक ने हँसते हुए कहा।

मुन्नू को बँगले के बाहर बाटिका में बना एक कमरा दे दिया गया। वह उसी में रहने लगा।

मुन्नू का भाग्य उदय हो गया था।

शहर के धनी, लखपती, सतीश बाबू के पुत्र विमलचन्द्र नगर के एक मशहूर कार्यकर्त्ता थे। जहाँ धन होता है, वहाँ दया नहीं होती; पर विमल बाबू के पास धन के साथ दया और स्वदेश-प्रेम दोनों थे। यों कहिए कि सोने में सुगन्ध थी। शान्ति देवी विमल बाबू की धर्म-पत्नी थीं। गांधी-आश्रम से कुछ ही दूर बने

हुए नये बँगले में वे रहते थे, विमल बाबू शहर के युवकों के आदर्श नेता थे।

मुन्नू अब उन्हीं के पास रहने लगा। अब वह आर्ट्स स्कूल में नियमित रूप से जाता है। खादी के साफ़-सुथरे कपड़े पहनता है। फटे और मैले कपड़े पहनने वाले लड़के में एकाएक यह परिवर्तन देख प्रिन्सिपल ने एक दिन उसे बुलाकर कारण पूछा। मुन्नू ने जब सारा वृत्तान्त कह सुनाया, तो प्रिन्सिपल ने प्रसन्न हो, उसके लिए दस रुपये की छात्रवृत्ति नियत कर दी।

स्कूल के लड़के भी अब मुन्नू से मैत्री जोड़ने लगे, मुन्नू को कभी-कभी क्राइस्टपुर में बिताये हुए दिन याद आ जाते। जो सुख, जो शांति वहाँ थी, वही सुख और शांति अब यहाँ भी है। साथ ही शांति जीजी के देशोद्धार और हरिजन-सेवा के भाव उसके हृदय में एक अनोखा उत्साह पैदा कर रहे थे। वहाँ पर वह सुखमय, पर कुछ आलस्यमय जीवन बिता रहा था। यहाँ पर सुख के साथ-साथ कर्तव्य-परायणता का जीवन बिता रहा है। शान्ति जीजी के साथ-साथ वह छुट्टी के दिनों में आसपास के गाँवों में जाकर उपदेश करता, हरिजनों के बच्चों को नहलाता, उन्हें गायत्री-मन्त्र सिखाता, उनमें अच्छे संस्कार पैदा करने का प्रयत्न करता।

उसके दिन इसी प्रकार अध्ययन और देश-सेवा में व्यतीत होने लगे।

२०

मुन्नू आज जल्दी ही जाग गया। उसने विमल बाबू के बँगले की बाटिका में आज एक वर्ष से एक छोटी-सी पर्ण-कुटी बना रक्खी है। उसी में वह पढ़ता और सोता है। शान्ति जीजी और विमल बाबू की इच्छा न होते हुए भी उन्हें इसके लिए अनुमति देनी पड़ी थी। बाटिका के पौदों को पानी सींचना, कुटिया में बैठे-बैठे चित्र बनाते रहना, सामने खिले हुए पुष्पों के सौन्दर्य को निहारना, गांधी-आश्रम और नदी की तरंगों को देखा करना, यही उसका प्रातःकाल का कार्यक्रम था।

मुन्नू अपने स्कूल के फाइनल ईयर में था। उसके चित्रों की अब बड़ी प्रशंसा होती है। कुटिया में बिछी हुई खाट पर लेटे-लेटे वह चिड़ियों का चहचहाना सुनता रहा। कोयल भी बोलने लगी।

उठ कर वह बिस्तर पर बैठ गया। नदी के जल को स्पर्श करता हुआ ठंडा समीर बह रहा था। वह खड़ा होकर बाहर आ गया। सामने हौज में फव्वारा जल बरसा रहा था। पवन जल के शीतल कणों को उड़ा रहा था। बड़ा सुहावना समय था। सामने आकाश में अरुणिमा छाई हुई थी। हौज के किनारे बैठ वह गाना गाने लगा। शान्ति जीजी ने उसे गाना सिखा दिया था।

कुटिया में से रंग, ब्रश और ड्राइङ्गपेपर ला, वह फव्वारे के पास की बेंच पर बैठकर चित्र बनाने लगा।

'क्या कर रहे हो मुन्नू ?'--कन्धे पर धीरे से हाथ रखते हुए शान्ति देवी ने पूछा।

'कुछ नहीं जीजी ! एक चित्र बना रहा हूँ।'

'मुन्नू, रानी जीजी का जवाब आया ?'

'नहीं आया जीजी ! न जाने क्या बात है। मुझे बड़ी चिन्ता लगी रहती है। पहला ही पत्र था; पर जवाब न मिला !'

'जवाब क्यों न दिया मुन्नू ?'

'क्या जानें, माताजी का क्रोध शायद अब भी न उतरा हो।'

'नहीं मुन्नू, ऐसा नहीं हो सकता। माताजी ऐसी क्रूर नहीं हो सकतीं।'

'हाँ, हो तो नहीं सकतीं। फिर न जाने क्यों जीजी ने जवाब न दिया।'

'देखो मुन्नू...'

'क्या जीजी ?'

'परीक्षा के बाद तुम वहाँ चले जाओ। दस ही दिन तो रहे हैं।'

'अच्छा जीजी, तुम मुझे जाने दोगी ?'

'जरूर। पहले तुम जाना। सबसे मिलना और फिर मुझे तार देना, तो मैं और वे भी वहाँ आ जायँगे। फिर......'

'फिर जीजी, फिर तो बस आनन्द ! आनन्द ! आनन्द !'

'आज भी तो आनन्द का दिन है मुन्नू।'

'हाँ जीजी ! मुझे तो आज बड़ा आनन्द मालूम हो रहा है। आज मुझे ऐसे ही प्रातःकाल की याद......'

'कैसी याद ?'

'कुछ नहीं जीजी।'

'तुम उदास कैसे हो गये मुन्नू, क्या बात है ?'

'क्या कहूँ जीजी ?'

'कुछ तो कहो, क्या लीना की याद आ रही है ?'

मुन्नू ने लजा कर मुख नीचा कर लिया।

'मिस लीना भी कभी मिल जायगी, घबड़ाओ मत !'—हँसते हुए—व्यंग करते हुए शान्ति देवी ने कहा।

मुन्नू ने लीना का सब वृत्तान्त शान्ति जीजी से कह दिया था। वह लीना को न भूला था। लीना को भूलना असंभव था। वह उसे अपना हृदय दे चुका था, फिर भी उसे लीना की याद न आये ? जब वह स्कूल में जाता, कहीं घूमते जाता, आसपास के गाँवों में हरिजन-कार्य के सम्बन्ध में जाता, या किसी सभा की मीटिंग में जाता, तब स्त्रियों की ओर एक बार अवश्य नजर दौड़ा लेता,

कि कहीं मिस लीना दिखाई पड़ जाय। बिछुड़ी हुई—त्यागी हुई लीना फिर से आ मिले। एक बार तो शान्ति जीजी ने भी उससे पूछा था कि वह क्यों इस प्रकार स्त्रियों की ओर देखा करता है। तब वह रो पड़ा था, और उसी समय उसने अपना सारा वृत्तान्त जीजी से कह सुनाया था। सब सुन कर जीजी बहुत हँसी थीं, बहुत सहानुभूति प्रकट की थी और उसे शान्त, संयत रहने का उपदेश किया था। कभी-कभी मुन्नू सोचने लगता—लीना उसे भूल गई होगी। शायद माइकेल..... । पर दूसरे ही क्षण वह इन विचारों को त्याग देता।

'मुन्नू, चुप क्यों हो गये।'

'कुछ नहीं जीजी।'

'हाँ...तो लीना की याद आ रही है ?'

'जीजी, तुम तो मज़ाक कर रही हो।'

'नहीं मज़ाक नहीं। अच्छा यह क्या बना रहे हो।'

'क्या चश्मा ले आऊँ जीजी।'—मुन्नू ने हँसते हुए कहा।

'अच्छा, बदला ले रहे हो!'

'नहीं, जीजी!'—हँसते-हँसते उसने कहा—'क्राइस्टपुर में मुझे एक सपना आया था, उसी का यह चित्र है। ईशु भगवान् और भगवान् शंकर एक दूसरे से भेंट कर रहे हैं।'

'अच्छा!'

शान्ति देवी ने बड़े गौर से चित्र देखते हुए भक्ति-पूर्वक हाथ जोड़ लिये।

'यह दूसरा चित्र है। इसमें ईशु भगवान् आश्वासन देकर क्राइस्टपुर से मुझे चले जाने की आज्ञा दे रहे हैं।'

'अच्छा !'

'इसे क्राइस्टपुर भेजने वाला हूँ।'

'अच्छा !'

अच्छा-अच्छा क्या कर रही हो जीजी !'—मुन्नू खीज पड़ा।

'वहाँ किस लिये भेजोगे ?'—शान्ति देवी ने हँसते हुए पूछा।

'मैं फादर मूर को एक पत्र लिखने वाला हूँ। साथ में यह चित्र भी उन्हें भेंट-स्वरूप भेजूँगा।'

'हाँ मुन्नू, उस प्रदर्शनी से क्या इनाम मिला ?'

'अभी तो कुछ नहीं जीजी।'

'आज ही तो नतीजा प्रकट होनेवाला था ?'

'हाँ शायद आज ही।'

'देखो क्या मिलता है।'

मुन्नू कुछ न बोला।

'मुन्नू तुम जाओगे ?'

'कहाँ जीजी ?'

'रानी जीजी से मिलने।'

'हाँ जीजी, जरूर जाऊँगा ; अगर तुम जाने दोगी।'

'परीक्षा के बाद चले जाओ। छुट्टियाँ वहाँ बिताना।'

'अच्छा जीजी।'

'मुन्नू, वे कहते थे, कि तुम भारत के बहुत बड़े चित्रकार बनोगे।'

'जीजी, फिर तुम मज़ाक करने लगीं !'

'नहीं मुन्नू, मैं सच कह रही हूँ।'

'विमल बाबू कहाँ हैं ?'

'अभी तो सो रहे होंगे।'

'और तुम...'

'मैं तुम्हारे पास खड़ी हूँ।'—शान्ति देवी ने बात काटकर कहा।

'नहीं जीजी, मैं यह कह रहा था कि तुम क्यों जल्दी उठ आईं ?'

'नींद न आई। अच्छा, वे जाग गये होंगे, मैं जाती हूँ।'

'वे कौन जीजी !'—मुन्नू ने हँसते हुए कहा।

शान्ति देवी हँसती हुई चली गईं।

चित्र में रङ्ग भर कर मुन्नू फादर को पत्र लिखने लगा।—

शान्ति-मेन्शन

ता०............

'पूज्य डीयर फादर,

पुनीत चरणों में प्रणाम।

आपके चरणों के समीप से भाग आने के पश्चात् मैं आज यह प्रथम पत्र लिख रहा हूँ। फादर, मैं आपकी दया को, आपके उपकारों को कदापि नहीं भूल सकता। मैं उनसे कदापि उऋण नहीं हो सकता।

जो कुछ भी मैंने उन्नति की है, वह आप ही की कृपा है। मैं वहाँ से कभी न भागता, यदि मुझे वहाँ अपना धर्म त्यागने

को वाध्य न किया जाता। मैं अपने धर्म को छोड़ने को तैयार न था। धर्म-त्याग की बात को सुनकर मैं काँप उठता था, हृदय व्याकुल हो उठता था; इसी से मुझे वहाँ से भागना पड़ा।

फादर, आप मेरे हृदय के उस द्वन्द्व को नहीं जान सकते--नहीं जान सकते। यद्यपि मैं चर्च में जाता था--सर्मन्स सुनता था और लार्ड क्राइस्ट को देव की तरह पूजता था और अब भी पूजता हूँ; पर फिर भी बेप्टिज़्म के नाम से मैं दहल उठता था। न जाने और कितने बालक मेरी भाँति व्याकुल हुए होंगे, और दुःख सहते हुए भी उन्हें अपना धर्म छोड़ना पड़ा होगा।

फादर आपका कार्य अत्यन्त पवित्र है; क्योंकि आप मुझ-जैसे अनाथ-असहायों की रक्षा करते हैं; पर मुझे दुःख है, आपकी सेवा में स्वार्थ है। क्या स्वार्थ है, यह आप समझ सकते हैं। आप इस बात को तो अवश्य ही मानते होंगे कि सब सच्चे हैं और सब अपने-अपने रास्ते से उस परम पिता के पास पहुँचना चाहते हैं।

फादर, आपके प्रति मुझे प्रेम है, मान है; पर आपकी यह सेवा स्वार्थ-रहित हो, तो सोने में सुगन्ध हो जाय।

पत्र के साथ अपना बनाया एक चित्र भेज रहा हूँ। आशा है, आप स्वीकार कीजिएगा।

आपका आज्ञाकारी—

ज्योर्जी—अब मुन्नू।'

पत्र को बन्द कर मुन्नू घूमने चला गया। आज छुट्टी थी। लौट कर आया, तो भोजन करने को बँगले में प्रवेश किया।

घर की राह

'हलो मुन्नू !'—विमल बाबू ने खादी की टोपी उतारते हुए कहा।

'कहाँ से आ रहे हैं ?'—मुन्नू बोला।

'ज़रा आश्रम गया था। शाम को प्रदर्शनी में चलोगे ?'—विशाल कमरे में गोल डाइनिंग टेबल से सटी हुई एक कुरसी पर बैठते हुए विमल बाबू ने पूछा।

'आप जाइएगा, तो जरूर चलूँगा।'

'और तुम्हें १०००) पुरस्कार मिला है, यह सुना तुमने ?'

'जी नहीं।'—अपने आनन्द के वेग को रोकता हुआ वह बोला।

'मुन्नू' तुम तो बड़े पोएट-पेन्टर बनते जा रहे हो !'

'जीजी की तरह आप भी बनाते हैं !'

'पुरस्कार कौन से चित्र पर मिला होगा ?'

'क्या है, कैसा पुरस्कार ?'—कहती हुई शान्ति देवी बाग में से फूल तोड़ना छोड़ कर दौड़ती हुई आईं।

'कुछ नहीं।'

'कुछ नहीं ! अभी तो पुरस्कार की बात कर रहे थे !'—कहते हुए शान्ति देवी ने विमल बाबू के कन्धे पर हाथ रख कर कहा—'बताओ ?'

'मुन्नू को अपने किसी चित्र पर १०००) का पुरस्कार मिला है !'

'ओहो ! तब तो आधा हमें भी मिलेगा, क्यों मुन्नू ?'

'मैं भी तो आपही का हूँ जीजी !'

रसोइया महाराज टेबल पर नाश्ते की तीन तश्तरियाँ रख गया। तीनों बैठकर नाश्ता करने लगे, और परस्पर मनोविनोद भी होता रहा।

शाम को सब प्रदर्शिनी देखने गये। लौटते समय रात हो गई थी।

'मुन्नू !'

'क्या जीजी ?'

'तुमने आर्य-सेवा-आश्रम देखा है ?'

'नहीं जीजी।'

'देखोगे ?'

'क्यों नहीं।'

तीनों उस ओर मुड़ गये। रेती में चलने लगे। वह बाग आया, जिसमें सबसे पहले मुन्नू को आश्रय मिला था। वह और आगे बढ़े। रात हो गई थी। बिजली की बत्तियों का प्रकाश, नदी की रेती में पड़ रहा था। उसी के सहारे चलते रहे। आगे एक सुन्दर इमारत दिखाई दी। पास जाकर देखा, तो लिखा था—'आर्य-सेवा-आश्रम'.

'जीजी, यहाँ की व्यवस्था कैसी है ?'

'बड़ी उत्तम। बच्चे-बच्चियाँ, स्त्रियाँ सभी रहते हैं और उन्हें शिक्षा दी जाती है। इसे ब्रह्मचर्याश्रम भी कहते हैं। आर्य-महिलाएँ इसमें ब्रह्मचरिणी के रूप में विद्याभ्यास करती हैं।'

'आर्य-समाज-द्वारा स्थापित होगा ?'

'और क्या, लिखा न है—'आर्य-सेवा-आश्रम ।'

अन्दर प्रवेश करते ही एक कतार में खड़ी अनेक आर्य स्त्रियाँ प्रार्थना करती दिखाई पड़ीं। बीच में खड़ी एक स्त्री वेद-मन्त्र का उच्चारण कर रही थी। जब वह एक चरण कहती, तो सब स्त्रियाँ उसे दुहरातीं।

तीनों खड़े-खड़े प्रार्थना सुनने लगे। मुन्नू की दृष्टि सहसा एक युवती स्त्री पर पड़ी। सफेद खादी की साड़ी पहने वह लीना-जैसी क्यों लग रही है ? कहीं वह लीना ही तो नहीं है ? उसका हृदय एक अलौकिक आनन्द से नाचने लगा।

प्रार्थना समाप्त होने के पश्चात् सब स्त्रियाँ अपने-अपने कमरे में चली गईं। वह युवती अभी तक वहीं पर खड़ी थी। शान्ति देवी ने उसके निकट पहुँच कर पूछा—आपका नाम ?

'मेरा नाम ?...'—उसने प्रति प्रश्न किया, मानों तंद्रा से जागी हो।

'जी।'

'मुझे शैलिनी कहते हैं।'

'तब तो आप मेरी हम राशि हैं ! अच्छा, लेडी सुपरि० कहाँ हैं ?'

'जी, वहाँ बाग में होंगी'—उस युवती ने कहा और वह भी अपने कमरे में चली गई।

मुन्नू ने दूर खड़े-खड़े फिर आँखें गड़ाकर उसे जाते हुए देखा, फिर भी वह उसे लीना-सी ही दीख पड़ी।

तीनों बाग में पहुँचे। एक मालती-कुंज में लेडी सुपरिन्टेंडेंट बैठी हुई थीं।

सबको आते देख 'नमस्ते! नमस्ते!' कहकर खड़ी होगईं और सबका स्वागत किया।

सब बेंच पर बैठ गये।

लेडी सुपरिन्टेण्डेंट को मुन्नू नया आदमी मालूम हुआ; इसलिए उन्होंने शान्ति देवी से पूछा—आपकी प्रशंसा?

'यह मेरे छोटे भाई हैं, इन्हीं को आज प्रदर्शनी में १०००) का इनाम मिला है।'

'अच्छा, अच्छा, धन्यवाद! गांधीजी वाले चित्र पर?'

'जी हाँ!'—शान्ति देवी ने कहा।

'बड़ा सुन्दर चित्र है वह तो! आप चित्रकार ही नहीं, कवि भी मालूम होते हैं; नहीं तो ऐसे अलौकिक भाव महात्मा जी के मुख पर कैसे आ सकते थे? और वह अछूत बालक, जो नीचे बैठा है, उसके चेहरे का भाव कितना मनोहर है!

इतने ही में शैलिनी एक तार लेकर आ पहुँची। तार लेडी सुपरिन्टेन्डेन्ट को देकर वह जाने लगी। एकाएक मुन्नू पर उसकी दृष्टि पड़ी। उसने अबकी बार मुन्नू को भली-भाँति देखा। मुन्नू भी उसकी ओर देखने लगा। दोनों एक दूसरे को देखकर जैसे चौंक पड़े। वह नीची दृष्टि किये चली गई; पर हृदय में न जाने क्या हो रहा था। शांति देवी ने दोनों के भाव ताड़ लिये। मुन्नू कुछ विमनस्क-सा हो गया।

शान्तिदेवी ने अन्य बातें खत्म करते हुए, लेडी सुपरिंटेण्डेंट से पूछा—अभी जो युवती आई थीं, क्या वे नई आई हैं ?

'जी हाँ। अभी आठ-दस दिन हुए, रानीपुर के आर्य-मंदिर से परीक्षा देने आई हैं।'

'इनके विषय में कुछ अधिक बता सकेंगी ?'

'अवश्य। समाज के कार्यकर्त्ता क्राइस्टपुर से इनका उद्धार करके लाये थे। दो वर्ष पहले रानीपुर में ही संस्कार हुआ था। नाम कुमारी शैलिनी है।'

मुन्नू का हृदय जोर से धड़कने लगा। शान्ति देवी उसके चेहरे का भाव ताड़ रही थीं। मन-ही-मन हँसते हुए उन्होंने लेडी सुप्रिन्टेन्डेन्ट से कहा—मैं कुमारी शैलिनी को निमंत्रित करती हूँ, क्या एक घण्टे के लिए आप उन्हें मेरे साथ भेज सकेंगी ?

'क्यों नहीं, अवश्य। अभी बुलवाती हूँ।'—कहकर उन्होंने शैलिनी को बुलवाया।

जरा देर में शैलिनी आ गई। उसके आते ही शान्तिदेवी ने कहा—'कुमारी शैलिनी, आज मैं तुम्हें अपने यहाँ भोजन करने को निमंत्रित करती हूँ, मैं अभी तुम्हें अपने साथ ले चलूँगी आशा है स्वीकार करोगी। हाँ, वहाँ से सुरक्षित लौटा दूँगी, कैद न करूँगी—विश्वास रखो।'—शान्तिदेवी ने हँसते हुए एक मार्मिक कटाक्ष किया।

आर्य-सेवा-आश्रम देखने के पश्चात् लेडी सुप्रिन्टेन्डेन्ट की आज्ञा ले, शैलिनी के साथ सब बाहर निकल आये। चांदनी रात थी।

मुन्नू से न रहा गया, उसके मुख से अचानक निकल गया—लीना !

लीना भी कह उठी—ज्योर्जी !—और मुख नीचा कर लिया।

'ओहो ! शरमा गई ?'—शान्ति देवी ने मुस्कराते हुए कहा।

शैलिनी मुख नीचा किये रही, कुछ बोल न सकी।

'अच्छा, हम जाते हैं, जरा हमें उस बँगले में काम है, तुम इनके साथ घर चलो।'—विमल बाबू और शान्ति देवी दोनों बोल उठे।

'नहीं शान्ति जीजी, साथ-ही-साथ चलेंगे।'

'नहीं, तुम इनके—शैला के—संग अपने बँगले जाओ। हम अभी आते हैं।'

दोनों एक ओर चल दिये। वे मुन्नू और शैला को एकान्त वार्त्तालाप का अवसर देना चाहते थे। बहुत दिनों के बिछुड़े हृदयों का मिलन कराना चाहते थे।

उनके चले जाने के बाद मुन्नू और शैला नदी के तट पर ही रेती में बैठ गये। चाँदनी रात थी। चन्द्र का प्रकाश नदी में पड़ रहा था।

'लीना—नहीं शैला !'—मुन्नू ने कहा।

शैलिनी कुछ न बोल सकी।

'शैला ! मैं तो समझा था, शायद अब तुमसे कभी भेंट न होगी।'

'मुझे भी आशा न थी, कि हम इस प्रकार फिर मिलेंगे।'

'शैला ! आखिर तुम यहाँ कैसे आ गई ?'

'मैं आज वहीं पर होती ; पर सौभाग्य से रानीपुर समाज के कार्य-कर्त्ताओं से मेरी भेंट हो गई। रानीपुर के आर्य-आश्रम में मैं संगीत सीखती थी। यहाँ परीक्षा देने आई हूँ।'

'तुम यहीं क्यों न आ गई ?'

'यहाँ तो बाल ब्रह्मचारिणियों को दाखिल किया जाता है मैं यहाँ न आ सकती थी। मेरी अवस्था अधिक थी।'

'तुम तो अब एक आर्य-महिला बन गई !'

शैला ने कुछ लजाकर मुख नीचा कर लिया।

'प्रिये शैला ! तुम्हें वह दिन याद है, जब इस शहर के स्टेशन के निकट हमारा प्रथम मिलन हुआ था ?'

'क्यों नहीं।'

'और वह रात भी याद है, जब अपने रूम में मैंने तुम्हारा... और मैं रात-ही-रात भाग आया था ?'—मुन्नू के ये शब्द प्रेम से लबालब भरे हुए थे।

'याद है।'

'और वह भी याद है जब माला...'

शैला ने फिर मुँह नीचा कर लिया। कितनी नम्रता और मधुरता थी उस चेहरे में ? कितना प्रेम झलक रहा था उन दो नेत्रों में ? रात्रि की उस गाढ़ नीरवता में, शांति के साम्राज्य में वे दोनों अकेले थे।

मुन्नू ने धीरे-से अपना हाथ बढ़ाया। दोनों के हाथ मिले।

दोनों के शरीर में बिजली-सी दौड़ गई। मुन्नू ने उसे अपनी ओर खींच अपने हृदय से लगा लिया। दोनों के प्रेमाश्रु एक दूसरे के गालों पर पड़े। कुछ क्षण के लिए दोनों शांत हो गये, कितनी अथाह शांति थी इस मिलन में ?

'शैला ! तुम...'—वह धीरे से बोला।

'हाँ, प्राणेश !......'

२१

मुन्नू की परीक्षा समाप्त हो गई और विमल बाबू और शांति देवी ने शैलिनी के साथ उसका पाणि-ग्रहण भी करा दिया। आज वह बड़े उल्लास से, प्राणप्रिया शैला के साथ अपने बाबूजी से, माताजी से, अपनी रानी जीजी से और शैलआ दि से मिलने जा रहा है।

'प्रिये ! आज मैं कितना सुखी हूँ ? तुम्हारे प्रेम में, तुम्हारे सान्निध्य में, मैं स्वर्गीय सुख का अनुभव कर रहा हूँ'—थर्ड क्लास के एक कम्पार्टमेंट में बैठे हुए मुन्नू ने शैला से कहा।

'मैं भी धन्य समझ रही हूँ अपने भाग्य को।'

'शैला, जरा इधर आओ'—पास बुलाते हुए मुन्नू ने कहा।

शैला सरक कर उसके पास चली गई।

गाड़ी बड़े वेग से वृक्ष, पहाड़, नदी, नाले, और खेतों को

छोड़ती हुई चली जा रही थी। जिस छोटे से कम्पार्टमेंट में वे बैठे थे, उसमें कोई न था। पूर्व दिशा में अरुणोदय की लालिमा छा गई थी। ठंढा समीर जोरों से बह रहा था।

'प्रिये शैला!'—अपनी प्रियतमा को पास खींचकर हृदय से लगाते हुए वह बोला—'आज मेरे हृदय में अपार आनन्द उमड़ रहा है। आज हम रानी जीजी के पास, बाबूजी के पास जा रहे हैं। शैला! तुम मेरे इस आनन्द को नहीं समझ सकतीं। शैला, शैला, मैं परमात्मा को शतशः प्रणाम करता हूँ।'

'प्राणेश, मुझे भी आज बड़ा आनन्द हो रहा है कि आपके साथ मैं भी जीजी के दर्शन कर सकूँगी।'

'वह चित्र कहाँ है शैला?'—आलिंगन शिथिल करते हुए उसने पूछा।

'इस पैकेट में बँधा है, निकालूँ?'

'हाँ, ज़रा निकालो।'

शैलिनी ने चित्र निकाला।

'शैला! यह चित्र बाबूजी को भेंट करने के लिए बनाया है। हमारे बाल्यकाल का यह चित्र है—जब मेरे हाथ से शैल बाबू गिर पड़े थे।'

'अच्छा!'

'अच्छा, रख दो। स्टेशन आ रहा है। यहीं पर उतरना होगा। यहीं से गाँव को जाने का कच्चा रास्ता है।'

स्टेशन आ गया। प्रातःकाल हो चुका था। आज उसी

घर की राह

स्टेशन पर वह खड़ा था, जहाँ से सात-आठ वर्ष पहले वह भाग निकला था। मुन्नू का हृदय स्टेशन को देखकर प्रेम से भर गया। कैसे सुखमय भाव उठ रहे थे उसके हृदय में! आज वह अपने प्यारे-प्यारे गाँव के पास पहुँचा है। अब वह सबसे मिलेगा, कितना आनन्द आयेगा!

पर इतने वर्षों में कितना परिवर्तन हो गया है? स्टेशन पर एक किराये की मोटर खड़ी है। जहाँ पहले ताँगा भी न रहता था, वहाँ आज मोटर!

दोनों मोटर में बैठ गये। मोटर पों-पों करती हुई चल दी। वही वृक्ष थे, वही धूल से ढकी सड़क थी। कुछ दूरी पर वही बड़ा-सा गाँव आया।

हाँ, वही खेत है, वही घर है, जहाँ पर ननकू ने दो-तीन रोटियाँ और पालक का शाक खिलाया था। मोटर ठहर गई। दोनों उतर गये। कुँए की जगत पर आज भी काली किनार की धोती सूख रही थी। ननकू चरस चला रहा था; पर माली नहीं था। दोनों चरस के पास पानी पीने चले गये। ननकू पहचान न सका।

'ननकू! भूल गये?'

'मैंने नहीं पहचाना बाबूजी!'

'मैं वही हूँ...जो...जो यहाँ से तुम को भ्रष्ट करके भाग गया था, मुन्नू।'

'अच्छा भैयाजी! राम-राम! राम-राम!'

'तुम्हारे पिता कहाँ हैं ?'

'वे तो चल बसे भैयाजी उस लोक में !'—आकाश की ओर हाथ ऊँचा करता हुआ ननकू बोला।

एकाएक मुन्नू के हृदय में शोक के भाव उठने लगे।

'अच्छा राम-राम भाई !'—मोटर में बैठते हुए मुन्नू ने कहा।

मोटर फिर चल दी। रास्ता, नदी, नाले, वृक्ष और पुल वही थे। रानी जीजी क्या कर रही होंगी ? हाँ, शाक काट रही होंगी। माताजी रोटी बना रही होंगी। बाबूजी अस्पताल में रोगियों की चिकित्सा कर रहे होंगे।

फिर विचार बदले। बाबूजी वहाँ होंगे कि नहीं ? वे लोग वहाँ मिलेंगे, कि नहीं ? न जाने क्यों शंकाएँ उठने लगीं। नहीं, नहीं, अवश्य मिलेंगे। जाते ही वे दोनों माताजी के चरणों में शीश नवा देंगे। फिर उनके चरणों में सब भेंट रख देंगे।

अब वह गाँव दिखाई दिया, वही गाँव, वही चुनियाँ का घर। मोटर पैसेञ्जर लेने खड़ी रही। वे नीचे उतर पड़े। चुनियाँ ने उसे न पहचाना। उसके बच्चे के हाथ में मुन्नू ने दो रुपये रख दिये।

सामने वही वट वृक्ष खड़ा था, जहाँ पर तुलसी महाराज की ठोकरें खाई थीं। मोटर और आगे बढ़ी। बन, वृक्ष, गाँव, नदी, नाले पार करती जा रही थी। अभी न जाने कितनी देर लगेगी ? मुन्नू अधीर हो उठा। शैला से बातें करना भी भूल गया। वह बार-बार घड़ी में देखता और अँगड़ाइयाँ लेता। कभी कुछ गुनगुनाने लगता। एक मिनिट, एक घण्टे-जैसा बीत रहा था। इसी समय

टायर बर्स्ट हो गया। वह उतर पड़ा, ड्राइवर से बोला—अच्छा, हम ज़रा पैदल चलते हैं।

'नहीं बाबूजी, ज़रा ठहरिए—अभी दूसरा टायर लगाया जाता है।'

'नहीं, हम धीरे-धीरे चल रहे हैं, तुम आओ।'

दोनों चल दिये। गाँव अभी तीन मील दूर था। वे दोनों आज उसी गाँव को जा रहे थे, जहाँ पर उसने अपना बाल्यकाल बिताया था। मुन्नू का हृदय आनन्द से नाचने लगा।

'प्रिये शैला, यही कैथ का वृक्ष है, जहाँ बाल्यकाल में हमने न जाने कितने कैथ खाये थे।'

आगे चले, अब गाँव दो ही मील रह गया। कितना आनन्द-मय दिन था आज का!

मोटर भी आ गई। दोनों फिर बैठ गये। लो, सामने गाँव दिखाई देने लगा। मुन्नू आतुर हो उठा। थोड़ी देर में थाना आ गया। सराय भी आ गई। वह इमली का वृक्ष है और बाईं ओर वही श्मशान। और आगे बढ़े। लीजिए, अस्पताल भी दिखने लगी।

अरे! पर वह बड़ का पेड़ कहाँ गया? वही मैदान, वही धूल से ढकी हुई सड़क, वही खेत और वही अमराई; पर वह बड़ का पेड़?

उसके हृदय में तीव्र वेदना उठने लगी। दोनों मोटर से उतर पड़े। सामान उतरवा लिया। दोनों अस्पताल के भीतर चले। हाँ, वही वाटिका है, जिसमें बाबूजी शाम को बैठा करते थे और

उसे उपदेश देते थे। वही आँगन है, जहाँ पर लोहे की खाट पर वह सोता था। ऐं! कुरसी पर यह अपरिचित व्यक्ति कौन है?

'डॉक्टर साहब कहाँ हैं?'—उसने पूछा।

'कहिए, मैं ही डॉक्टर हूँ।'

मुन्नू का हृदय मानों यह सुन कर सन्न हो गया। तो क्या वह जिनसे मिलने आया है, वे यहाँ नहीं हैं? इतना परिश्रम व्यर्थ जायगा? वह घर में कैसे जा सकता है? इस घर पर मुन्नू का अब क्या अधिकार? स्थान वही है; पर बाबूजी, माताजी, रानी जीजी, और शैल बाबू कहाँ हैं? उसका हृदय विदीर्ण होने लगा। वह लौट आया। अधिक पूछने की सामर्थ्य न रही।

ठाकुर के मकान पर गया। पारबती घर में रोटी बना रही थी।

'पारबती?'

'कौन है?'

'मुन्नू।'

'ऐं! मुन्नू भैया? आओ, आओ भैया!'—एक पाँच वर्ष के बालक को रोटी देती हुई पारबती बोली। उसने हाथ धो खटिया बिछा दी। दोनों खटिया पर बैठ गये। शैला मुन्नू के हृदय की वेदना समझ गई थी। वह कुछ न बोली।

'पारबती, ठाकुर कहाँ हैं?'

'गाँव गये हैं।'

'क्यों?'

'लड़ाई हो गई है।'

'किससे ?'

'माँ से।'

'कैसे ?'

'कुछ नहीं, जरा-सी बात थी।'

'और बाबूजी कहाँ हैं ?'

'बाबूजी की तो बदली हो गई।'

'कब ?'

'बहुत दिन हुए।'

मुन्नू खड़ा हो गया। वह हीरा भंगी से मिला। कुएँ के पास गया। वही कुँआ है, जामुन के नीचे। स्त्रियाँ अब भी पानी भर रही हैं। जामुन की ओर देखते ही मुन्नू के हृदय का शोक उमड़ आया। उसके नेत्रों से अश्रु टपकने लगे ; वह जब यहाँ से भागा था, तब पहले इसी कुएँ पर आया था। चाँदनी रात थी। रानो जीजी ने कितने प्रेम से उसे घर में बुलाया था ? हाँ, वही घर सामने खड़ा है ; पर उसकी जीजी नहीं हैं। अब वह वहाँ नहीं जा सकता। कितना परिवर्तन हो गया है !

'शैला ! शैला ! जीजी, माताजी, बाबूजी सब न जाने आज कहाँ होंगे ?'

'दुखी न होओ। आखिर कहीं तो होंगे ही, मिल जायँगे। पता लगाना चाहिए।'

'शैला ! ठीक कहती हो, अब उनका पता लगाना होगा, तभी चैन पड़ेगी।'

२२

दूसरे दिन, शोकपूर्ण हृदय से दोनों ने वह गाँव छोड़ा और मोटर-द्वारा उस गाँव के लिए प्रयाण किया, जहाँ बाबूजी की बदली हुई थी।

गाड़ी का वेग ज्यों-ज्यों कम होता जाता था, त्यों-त्यों मुन्नू की अधीरता बढ़ती जाती थी। स्टेशन से वह गाँव ५० मील दूर था। चार घण्टे तक मोटर चलती रही। आखिर मोटर गाँव में पहुँच गई। खड़ी हो गई। गाँव टेकरी पर आबाद था। दोनों अस्पताल की ओर चल दिये। रास्ते के बाईं ओर एक गम्भीर नदी बह रही थी। एक ओर अस्पताल दिखाई दी। नदी में एक छोटा-सा बजरा, हवा से जल तरंगों पर झोंके खा रहा था। घाट पर अनेक स्त्रियाँ स्नान कर रही थीं। कोई कपड़े धो रही थीं। कोई बालों में काली मिट्टी लगा कर मल रही थीं; पर मुन्नू की दृष्टि किसी ओर भी न गई।

घर की राह

अस्पताल के बाहर छोटे-से चबूतरे पर तीन-चार मनुष्य बैठे हुए नदी का सायंकालीन दृश्य देख रहे थे।

'डॉक्टर साहब कहाँ हैं?'—मुन्नू ने वहाँ जाकर पूछा।

'कहिए, मैं ही डॉक्टर हूँ।'

'आपके पहले जो डॉक्टर थे, वे कहाँ गये?'

'एक साल हुआ उनकी पेन्शन हो गई। वे रिटायर हो गये।'

'अब वे कहाँ गये।'

'अपने देश।'

मुन्नू हताश हो गया।

• • •

मुन्नू देश भी पहुँचा; पर वहाँ भी पता न चला। पूछ-ताछ पर मालूम हुआ कि वे वानप्रस्थी हो गये हैं। उसका हृदय बाबूजी, माताजी तथा रानी जीजी के दर्शनों को तड़प रहा था। उसकी सब आशाएँ भंग हो गईं।

'प्रिये!'

'प्राणेश?'

'हृदय बेचैन है—व्याकुल है। बाबूजी और जीजी आदि के दर्शन न होंगे, तो सच कहता हूँ प्रिये मेरी न जाने क्या हालत होगी। ओह! दिल को चैन नहीं है। चलो प्रिये! वे इस सृष्टि के पट पर जहाँ भी होंगे, उन्हें खोज निकालना होगा।'

'मैं तैयार हूँ प्रियतम!'

दोनों चल पड़े। अब वे वन-वन भटकेंगे, नदी-नाले, गिरि-

गुहा, सब खोज डालेंगे। प्रकृति सौंदर्य का नीरीक्षण करेंगे, कन्द-मूल खायेंगे और अपने बाबूजी का, अपनी रानी जीजी का पता लगा कर रहेंगे।

जहाँ कहीं भी उन्हें सन्देह होता, वे उतर पड़ते। सब जगह खोज डालते। दोनों में इतना प्रगाढ़ प्रेम था कि एक दूसरे को तनिक-सा भी कष्ट न होने देते। शैला का सेवा-भाव और स्नेह तो पराकाष्ठा को पहुँचा हुआ था। वह स्वतः कष्ट उठाती; पर मुन्नू को तनिक भी कष्ट न होने देती। मुन्नू जब किसी सुन्दर दृष्यमान पहाड़ी की तलहटी में वृक्ष के नीचे बैठ चित्र बनाने लगता, तो शैला सब सामग्री प्रस्तुत कर देती और काम हो जाने पर सँभाल कर रख लेती। मुन्नू जब चित्र पूरा कर लेता, तो किसी पत्रिका में छपने भेज देता और खासा पुरस्कार प्राप्त करता। कुछ अपने खर्च के लिए रखता और शेष हरिजन-सेवक-संघ को भेज देता। आजकल यही दोनों का कार्यक्रम हो रहा था।

नदी-निर्भर के संगीत में, पहाड़ियों की ऊँची चोटियों पर खड़े होकर, ठंढे समीर का सेवन करने में, और हरे-हरे खेतों को देखने में अब उसे अधिक आनन्द आता। ऐसे समय शलिनी को अपने पास बिठा, उससे मीठी-मीठी बातें करता, अपने बाल्यकाल की, अपने बाल्य-सखा शैल और कल्लू की, अपनी रानी जीजी की और अपनी माताजी तथा बाबूजी की। शोक का वेग जब अधिक बढ़ जाता, तब पहाड़ के किसी उच्च

शिखर की चट्टान पर बैठ जाता और ॐकार-ध्वनि में तल्लीन हो जाता। फिर आँखें खोल आकाश और चन्द्रिका की ओर देखा करता। फिर एकाएक आवेग के साथ फहराते पवन में खड़ा हो, अपने दोनों हाथों को उन्मत्त की भाँति ऊँचा करता। अपने पैरों को फैला कर खड़ा हो जाता।

इन सब बातों से शैला डर जाती। व्याकुल हो उठती। उसके पीछे खड़ी हो, उसके स्कन्ध-प्रदेश पर, बिखरे हुए बालों से युक्त अपने मुख को रख, सिसक-सिसक कर रोने लगती। वह उसके बालों पर हाथ फेरता-फेरता कुछ क्षणों के लिए शान्त हो जाता। फिर धीमे से उसके कपोलों को चूम लेता। उस समय, उस उच्च गिरिवर के शृंग पर—उस चाँदनी में—इन दो युवक युवतियों का स्नेहालिंगन आकाश के चित्रपट पर कैसा सुन्दर दिखाई देता! कितने अद्भुत भाव उत्पन्न करता, अहा!

मुन्नू जब शैला से गाने के लिए कहता, तो उस शान्त-अगाध वातावरण में शैला का कोमल मधुर स्वर गूँज उठता। फिर दोनों एक दूसरे का हाथ पकड़े, चट्टानों पर पैर रखते उसी पहाड़ पर कुछ दूर बनी हुई एक साधु की पर्णकुटी में विश्राम के लिए चले जाते।

दक्षिण में भी प्रकृति देवी ने अपना साम्राज्य भली-भाँति फैला रक्खा है। ट्रेन पहाड़ों में से गुजर रही है। आस-पास ऊँचे-ऊँचे पहाड़ सघन वृक्ष-राजि से ढके हुए हैं। जहाँ-तहाँ छल-छल कल-कल करते झरने दिखाई दे रहे हैं।

घर की राह

'शैला ! हम इसी स्टेशन पर क्यों न उतर जायँ !'—मुन्नू ने आस-पास के सुन्दर दृश्य को देखते हुए कहा।

'स्थान तो बड़ा सुन्दर है। पहाड़ी पर झोंपड़े कैसे सुन्दर मालूम हो रहे हैं !'

दोनों उतर पड़े। इस स्थान का वातावरण कितना गंभीर है ? चारों ओर झाड़-झंखाड़ों से ढके हुए पहाड़-ही-पहाड़ दिखाई दे रहे हैं। सायंकाल का समय हो चला है। शीतल-मंद पवन वह रहा है।

स्टेशन से बाहर हो, दोनों पहाड़ी की ओर चल दिये। कहीं भी टिक रहेंगे।

शारीरिक कष्ट की परवाह तो उन्होंने छोड़ ही दी थी। जहाँ प्रेम है वहाँ सुख-ही-सुख है—आनन्द-ही-आनन्द है। मुन्नू शैला से प्रेम करता है और शैला मुन्नू से। और शैला का प्रेम एक आर्य-ललना का प्रेम है।

मुन्नू आज आन्तरिक आनन्द की पराकाष्ठा पर पहुँच चुका है। सृष्टि मानों आज उसके सामने नाच रही है। दोनों चले जा रहे हैं। पहाड़ी पर चढ़ने की पगडण्डी के आस-पास सघन वृक्षों के कारण अन्धकार-सा छा गया था। ऊपर चढ़ने लगे। ज्यों-ज्यों वृक्ष घने होते गये, त्यों-त्यों अन्धकार बढ़ता गया।

दोनों ने परवाह न की, चलते ही रहे। कुछ देर में, पूर्णिमा का चंद्र अँधेरे को भगाता हुआ अपनी सोलहों कला-सहित खिल उठा। वृक्ष भी कम होते गये। ऊपर बढ़ते-बढ़ते रास्ता साफ

दिखाई देता गया। दोनों बातें करते बढ़ते ही रहे। कभी खड़े हो जाते, छिटकी हुई चाँदनी को देखने लगते। फिर चलने लगते। कुछ ऊपर की ओर रोशनी दिखाई दी। साहस बढ़ा। चलने लगे, हारमोनियम के स्वर सुनाई देने लगे। अहा! इस नीरव शान्ति में, इस नैसर्गिक सौंदर्य में, इस मदमाती, मदभरी चाँदनी में, इस पहाड़ पर यह संगीत!

मुन्नू और शैला खड़े हो सुनने लगे।

मुन्नू ने कहा—कोई आश्रम मालूम होता है, यहीं क्यों न ठहर जायँ।

'क्या हर्ज है, ज़रा बढ़कर देखो तो।'

'इस समय बाजा कौन बजा रहा होगा?'

कोई बनदेवी होगी।'

'हो सकता है। कितना मनोहर, कैसा मधुर संगीत है! मानों अमृत झर रहा है। संगीत भी ब्रह्मानन्द तक पहुँचा देता है! बनदेवी के सिवा और कौन इतना सुंदर गा सकता है?'

सुनते-सुनते वे दोनों ऊपर बढ़ने लगे। शैला ने कहा—इसी चट्टान पर बैठकर सुनें।

दोनों बैठ गये। पास ही कल-कल करता, उस संगीत में अपना अलौकिक नैसर्गिक संगीत मिलाता, एक झरना बह रहा था। दूर-दूर के सुन्दर दृश्य देखते हुए दोनों गीत सुनने लगे।

'शैला! सचमुच अमृत बरस रहा है—आनन्द बह रहा है। पी लो प्रिये, नहीं तो फिर हाथ न आयेगा।'

दोनों फिर ऊपर बढ़े। गीत पूरा हो गया था ; आश्रम दिखाई दिया। एक कुटिया के सामने एक वाटिका-सी बनी। एक गूलर का बड़ा-सा वृक्ष खड़ा है। वृक्ष के नीचे चट्टान पर कोई बैठा है। कुटिया में धूनी के पास एक साधु तथा एक और स्त्री बैठी हुई है।

पैरों की आहट सुन वृक्ष के नीचे बैठी हुई एक स्त्री आगे बढ़ी। दोनों उसके पास पहुँच गये। चाँदनी में उससे दोनों की आँखें मिलीं।

'ऐं! रानी जीजी ?'—मुन्नू चौंक पड़ा।

'ऐं! मुन्नू भैया ?'—रानी जीजी की भी वही दशा हुई।

मुन्नू रानी जीजी के पैरों पर गिर पड़ा।

'जीजी! तुम यहाँ कैसे ?'—मुन्नू ने पूछा।

शैली ने भी जीजी के पैर छुए।

'माताजी और बाबूजी से मिलने आई हूँ।'

'ईश्वर की लीला भी अपार है! जिन लोगों के मिलने की आशा छोड़ रक्खी थी, वे आज इस प्रकार अचानक मिल गये।'

मुन्नू दौड़ा, और कुटिया में बैठे बाबूजी तथा माताजी के चरणों में जा पड़ा।

'पिताजी! माताजी!'

'मुन्नू! बेटा! मुझे माफ करना'—कहते हुए माताजी ने उसे छाती से लगा लिया।

ऊपर से तीन-चार व्यक्ति उतरते दिखाई दिये।

'अरे मुन्नू भैया !'—शैल बाबू ने दौड़ कर मुन्नू को छाती से चिपटाते हुए कहा।

'माताजी तथा बाबूजी को प्रणाम कर शैलिनी, रानी से बातें करने में उलझ गई।'

'अने यान मुन्नू ! तुम तहाँ भद दये थे ?'—कल्लू ने भेंटते हुए कहा।

'यह रमेश बाबू हैं, हमारे जीजा, रानी जीजी के...'—शैल बाबू ने कहा।

मुन्नू ने बड़े प्रेम से दोनों हाथ जोड़ते हुए कहा—नमस्ते !

सहसा मुन्नू का ध्यान चतुर्थ व्यक्ति पर पड़ा। सफेद दाढ़ी, गले में क्रॉस और मुख पर देदीप्यमान कान्ति !

'ऐं ! फादर, आप भी यहाँ हैं ?'

'हाँ बेटा ! मैं भी यहीं हूँ। तुम्हारे जाने के बाद मुझ पर अनेक विपत्तियाँ आईं। मेरी अकेली बहन जल में डूब कर मर गई। उसी समय तुम्हारा पत्र आया था। मुझे मालूम हुआ—दरअसल मेरे कार्य में स्वार्थ है। अब मैं स्वार्थ-रहित हो, दीन-दुखियों की सेवा करता हूँ और परम तत्त्व की प्राप्ति के लिए ऐसे महात्माओं का दर्शन करने आता हूँ।'

'फादर ! मेरे जीवन के आप ही त्राता हैं।'—पैरों पर गिर कर मुन्नू बोला।

सब कुटिया के बाहर आकर गूलर के वृक्ष के नीचे बैठ गये।

ईश्वर की—उस परमात्मा की—असीम कृपा का फल है कि

आज मुन्नू हमें फिर से मिल गया। आज असीम आनन्द का अवसर उपस्थित हुआ है। आओ, सब मिलकर उस परम पिता का गुणानुवाद करें। भजन गायें।

बाबूजी ने इकतारा लिया। रानी और शैलिनी ने मँजीरे लिये, शैल और कल्लू ने करतालें। टुन-टुन-झुन-झुन मजीरों और करतालों की झनझनाहट में बाबूजी के मुँह से कबीर का एक भजन निकलने लगा। साथ-साथ माताजी और रानी जीजी भी गा रही थीं। उस शांत स्थान में, उस पर्वत के ऊपर चाँदनी में, एक स्वर्गीय रस बरसने लगा।

भजन के पश्चात् सारी मंडली का हास्य चारों ओर गूँज उठा।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

———